इस्लाम क्या है?

मौलाना वहीदुद्दीन ख़ान

इस्लाम क्या है?

मौलाना वहीदुद्दीन ख़ान

संपादन टीम
ख़ुर्रम इस्लाम क़ुरैशी
इरफ़ान रशीदी

CPS International
centre for peace and spirituality

Goodword

First Published 2024

This book is copyright free and royalty free. It can be translated, reprinted, stored or used on any digital platform without prior permission from the author or the publisher. It can be used for commercial or non-profit purposes. However, kindly do inform us about your publication and send us a sample copy of the printed material or link of the digital work.
e-mail: info@goodwordbooks.com

CPS International
Centre for Peace and Spirituality International
1, Nizamuddin West Market, New Delhi-110013
e-mail: info@cpsglobal.org
www.cpsglobal.org

Goodword Books
A-21, Sector 4, Noida-201301
Delhi NCR, India
e-mail: info@goodwordbooks.com
www.goodwordbooks.com

Printed in India

प्रस्तावना

पुस्तक "**इस्लाम क्या है**?" में इस्लाम के बुनियादी सिद्धांतों को सरल और प्रभावी ढंग से समझाया गया है। इस्लाम, मानवता के लिए ईश्वर द्वारा निर्धारित एक जीवन शैली है, जिसका मुख्य उद्देश्य इंसान को एक नैतिक और परिपूर्ण जीवन जीने के लिए प्रेरित करना है।

इस्लाम के सिद्धांत, जैसे एक ईश्वर की मान्यता, परलोक पर विश्वास, और नैतिक मूल्यों की स्थापना, जीवन को एक दिशा और उद्देश्य प्रदान करते हैं। यह हमें सिखाता है कि हमारी आज़ादी ईश्वर की योजना का हिस्सा है और हमें अपनी इच्छाओं के बजाय ईश्वर की इच्छाओं को प्राथमिकता देनी चाहिए।

इस्लाम को मुसलमानों के व्यवहार से नहीं आंका जाना चाहिए, बल्कि मुसलमानों को इस्लामी शिक्षाओं की कसौटी पर परखा जाना चाहिए। यही दृष्टिकोण इस्लाम की वास्तविकता को समझने और उसे सही तरीके से अपनाने का मार्ग दिखाता है।

विषय-सूची

ईश्वर 6
फ़रिश्ता 7
पैग़म्बर 8
क़ुरआन 9
हदीस-ए-रसूल 11
इस्लाम 12
ईमान 13
इम्तिहान 14
नियत 16
परलोक 17
स्वर्ग और नर्क 18
रूहानियत 19
तक़्वा 21
शुक्र 22
ज़िक्र 23
नमाज़ 25
रोज़ा 26
ज़कात 27
हज 28
नैतिकता 30
सब्र 31
सच बोलना 32
वादा 34

सफ़ाई 35
सहनशीलता 36
एराज़: अवॉइडेंस 38
मतभेद के समय 39
पड़ोसी 40
हुक़ूक़-उल-इबाद— बंदों के अधिकार 41
इंसान की धारणा 43
जनसेवा 44
समानता 45
इंसानी एकता 47
सकारात्मक सोच 48
शांति प्रियता 49
ईश्वरमय जीवन 50
सुबह और शाम 52
प्रेरणा ग्रहण करना 53
घरेलू जीवन 54
आत्म-सम्मान 56
सादगी 57
ईश्वरीय तरीक़ा 58
धन 60
खोना, पाना 61
मुक्ति (नजात) 62
जिहाद 64
ईश्वर को पुकारना 65

ईश्वर

ईश्वर एक है। ईश्वर हमेशा से है और हमेशा रहेगा। वह सब कुछ है। सारी चीज़ें ईश्वर से बनी हैं, पर ईश्वर किसी से नहीं बना। ईश्वर ही हर चीज़ को बनाने वाला है और वही पूरे संसार को चलाने वाला है।

'ईश्वर के सिवा कोई इबादत के लायक नहीं है। वह ज़िंदा है और हर चीज़ को संभालने वाला है। उसे न ऊँघ आती है और न नींद। जो कुछ आसमान में है और जो कुछ ज़मीन में है, सब उसी का है। उसकी इजाज़त के बिना कोई भी उससे सिफ़ारिश नहीं कर सकता। वह जानता है, जो कुछ उनके सामने है और जो कुछ उसके पीछे है। उसके ज्ञान में कोई दाख़िल नहीं हो सकता सिवाय उसके जिसे वह इजाज़त दे। उसकी बादशाहत आसमान और ज़मीन दोनों पर फैली हुई है। उसे उन्हें संभालने में कोई थकान नहीं होती। वही सबसे ऊँचे दर्जे वाला है।'

(क़ुरआन,अल-बकरा)

क़ुरआन में कहा गया है: 'कहो कि वह ईश्वर एक है। ईश्वर को किसी की ज़रूरत नहीं, न उसकी कोई औलाद है और न वह किसी की औलाद है और कोई उसके बराबर नहीं (अल-इख़लास)।

क़ुरआन की यह सूरहईश्वर के एक होने पर ज़ोर देती है। यह बताती है कि ईश्वर एक है और इसका मतलब क्या है। इस सूरह में ईश्वर के बारे में साफ़-साफ़ बताया गया है और उसे उन बातों से अलग किया गया है, जिन्हें लोग समय-समय पर ईश्वर से जोड़ते रहे हैं। ईश्वर कई नहीं है, वह केवल एक है। सब उसी के मोहताज हैं, जबकि वह किसी का मोहताज नहीं है। वह अपने आप में ही हर चीज़ पर काबू रखता है। वह इससे बुलंद है कि इंसानों की तरह वह किसी की औलाद हो या उसकी कोई औलाद हो। वह अकेला है, जिसकी कोई बराबरी नहीं। हर तरह की एकता सिर्फ़ उसी के लिए है और वह सिर्फ़ ईश्वर है।

एक ईश्वर का विश्वास इस्लाम का सबसे केंद्रीय विश्वास है। यही विश्वास इस्लाम का असली आधार है और यही इस्लाम की सभी शिक्षाओं का एकमात्र स्रोत है।

फ़रिश्ता

ईश्वर की बनाई हुई बहुत-सी प्राणियों में से एक प्राणी वह है जिसे फ़रिश्ता कहा जाता है। फ़रिश्तों को ईश्वर ने विशेष क्षमताएँ और अलग अधिकार दिए हैं। वे ब्रह्मांड में बड़े-बड़े काम कर सकते हैं, लेकिन उनका सारा काम ईश्वर की आज्ञा अनुसार होता है। वे छोटे-से-छोटे मामले में भी ईश्वर की बात नहीं टालते।

ब्रह्मांड में हर पल अनगिनत घटनाएँ हो रही हैं। जैसे सितारों की गति, सूरज और चाँद का चमकना, ज़मीन का घूमना। इसी तरह बारिश होना, मौसम बदलना और दूसरी कई बदलावों का होना। इंसान और जानवरों की नस्लें धरती पर लगातार बनी रहती हैं। इस तरह की अनगिनत घटनाओं का प्रबंध यही फ़रिश्ते करते हैं। वे ब्रह्मांड में ईश्वर के सबसे वफ़ादार और आज्ञाकारी सेवक हैं।

इंसान फ़रिश्तों को नहीं देखता, लेकिन फ़रिश्ते इंसानों को देखते हैं। वे ईश्वर की ओर से इंसान की देखभाल करते रहते हैं। यही फ़रिश्ते इंसान पर मौत लाते हैं और उसकी आत्मा को यहाँ से ले जाते हैं।

फ़रिश्ते इस दुनिया का प्रबंध भी करते हैं और वही फ़रिश्ते परलोक में स्वर्ग और नरक का प्रबंध भी करेंगे। ये फ़रिश्ते संख्या में अनगिनत हैं।

फ़रिश्तों के काम को एक बड़े कारख़ाने की मिसाल से समझा जा सकता है। किसी बड़े कारख़ाने में एक तरफ़ कई बड़ी-बड़ी और जटिल

मशीनें होती हैं। इन्हीं मशीनों से वह उत्पादन निकलता है, जिसके लिए कारख़ाना बनाया गया है, लेकिन ये मशीनें अपने आप नहीं चलतीं। इन्हें चलाने के लिए बहुत-से इंसानी मज़दूर चाहिए होते हैं। इसलिए हर कारख़ाने में बड़ी संख्या में इंसानी मज़दूर मेहनत करते रहते हैं, ताकि कारख़ाना ठीक से चलता रहे। इसी तरह ब्रह्मांड के विशाल कारख़ाने को चलाने के लिए असंख्य फ़रिश्ते नियुक्त हैं। दोनों कारख़ानों में बस यही फ़र्क़ है कि सामान्य कारख़ानों के इंसानी मज़दूर दिखाई देते हैं, जबकि ब्रह्मांड में काम करने वाले फ़रिश्ते आँखों से दिखाई नहीं देते।

पैग़म्बर

पैग़म्बर वह इंसान होता है जिसे ईश्वर अपनी तरफ़ से लोगों तक संदेश पहुँचाने के लिए चुनता है। जब ईश्वर किसी इंसान को पैग़म्बर बनाता है, तो फ़रिश्ता आकर उसे इस चुनाव की ख़बर देता है। इस तरह उस इंसान को यह विश्वास हो जाता है कि वह ईश्वर का पैग़म्बर है। फिर फ़रिश्ते के ज़रिए ईश्वर उस पर ज्ञान उतारता है, ताकि वह इस ज्ञानको सब इंसानों तक पहुँचा सके। पैग़म्बर, ईश्वर और इंसान के बीच का माध्यम होता है। वह ईश्वर से संदेश लेकर इंसानों तक पहुँचाता है।

ईश्वर ने इंसान को अक्ल दी है। वह उसकी मदद से प्रत्यक्ष बातों को समझ सकता है, लेकिन बहुत-सी बातें ऐसी होती हैं जिन्हें जानने और समझने के लिए केवल इंसानी ज्ञान काफ़ी नहीं होता। यहाँ तक कि मौजूदा दुनिया की गहरी सच्चाइयाँ भी इंसानी बुद्धि से पूरी तरह समझ में नहीं आतीं और जहाँ तक ईश्वर और परलोक की दुनिया का सवाल है, वह पूरी तरह से दिखाई न देने वाली दुनिया से जुड़ी है। इसलिए यह इंसानी बुद्धि की पहुँच से बाहर है।

पैग़म्बर इंसान की इस कमी को पूरा करते हैं। वे चीज़ों की असलियत बताते हैं। वे परलोक की दुनिया की ख़बर देते हैं। इस तरह वे इंसान को इस क़ाबिल बनाते हैं कि वह ज्ञान और समझदारी की पूरी रोशनी में अपनी ज़िंदगी की योजना बनाए और उसके अनुसार सफल ज़िंदगी का निर्माण कर सके।

इंसान जब से धरती पर बसा है, तभी से पैग़म्बर भी आते रहे हैं। वे हर दौर में इंसानों को ईश्वर की बातें बताते रहे। हालाँकि, पुराने समय के पैग़म्बरों का प्रामाणिक रिकॉर्ड सुरक्षित नहीं रहा। बाद की परिस्थितियों ने उनकी व्यक्तित्व को भी इतिहास से मिटा दिया और उनकी किताबों को भी अविश्वसनीय बना दिया।

आख़िरकार ईश्वर ने हज़रत मोहम्मद को अपना पैग़म्बर बनाया। आप उस समय पैदा हुए जब दुनिया में इतिहास का दौर आ चुका था और जल्दी ही उसके बाद वह समय आने वाला था जिसे प्रिंटिंग प्रेस का युग कहा जाता है। इस तरह आपको वे अनुकूल हालात मिले, जिन्होंने आपको एक प्रमाणित शख़्सियत बना दिया। आपकी लाई हुई किताब भी सुरक्षित रहकर प्रिंटिंग प्रेस के युग में पहुँच गई। इसके बाद इस बात की संभावना ही ख़त्म हो गई कि आपकी लाई हुई किताब में कोई बदलाव हो सके। हज़रत मोहम्मद ईश्वर के आख़िरी पैग़म्बर हैं और क़यामत तक के लिए दुनिया में ईश्वर के इकलौते प्रतिनिधि रहेंगे।

क़ुरआन

क़ुरआन ईश्वर की किताब है। क़ुरआन में जो शिक्षाएँ हैं, वे असल में वही हैं, जो पहले की आसमानी किताबों में भेजी गई थीं, लेकिन पहले की आसमानी किताबें अपनी मूल रूप में सुरक्षित नहीं रह पाई।

बाद में होने वाले बदलावों ने उन्हें अविश्वसनीय बना दिया। जबकि क़ुरआन अपनी असली हालत में पूरी तरह सुरक्षित है। इसलिए यह पूरी तरह से एक भरोसेमंद किताब है।

क़ुरआन में 114 अध्याय हैं। उनमें जो बातें कही गई हैं, उनका सार यह है कि इंसान एक ईश्वर को माने। वह यह माने कि वह केवल ईश्वर के सामने जवाबदेह है। उसे यक़ीन करना चाहिए कि आख़िरी पैग़म्बर हज़रत मोहम्मद के ज़रिए जो बातें ईश्वर ने बताई हैं, वे सब सही हैं और उन्हीं को मानने से इंसान के मोक्ष का दारोमदार है।

क़ुरआन का महत्त्व केवल यह नहीं है कि वह बहुत-सी आसमानी किताबों में से एक है, बल्कि इसका असली महत्त्व यह है कि यह बाक़ी सभी आसमानी किताबों के बीच एकमात्र भरोसेमंद किताब है, क्योंकि अन्य सभी किताबें बदलावों के कारण ऐतिहासिक रूप से अविश्वसनीय साबित हो चुकी हैं। पुराने आसमानी किताबों को मानने वाला व्यक्ति जब क़ुरआन को मानता है, तो वह अपने विश्वास को नहीं छोड़ता, बल्कि अपने विश्वास को ज़्यादामज़बूत और प्रमाणिक रूप में पा लेता है।

क़ुरआन ईश्वर की ओर से सबके लिए भेजी गई एक पवित्र किताब है। यह हर इंसान की अपनी किताब है, क्योंकि इसे उस ईश्वर ने भेजा है, जो हर इंसान का अपना ईश्वर है, न कि किसी और का। क़ुरआन कोई नई आसमानी किताब नहीं है। यह पहले की आसमानी किताबों का एक प्रमाणिक नया संस्करण है। इस नज़रिए से क़ुरआन सभी इंसानों और सभी समुदायों की किताब है। यह सबके लिए ईश्वर की रहमत का प्रतीक है। यह हर एक को भेजा गया ईश्वर का पूरा संदेश है। क़ुरआन उसी तरह पूरी दुनिया के लिए मार्गदर्शन है, जैसे सूरज पूरी दुनिया के लिए रोशनी और गर्मी का साधन है।

हदीस-ए-रसूल

क़ुरआन शब्द और अर्थ, दोनों के लिहाज़ से ईश्वर का कलाम है। हदीस उस संग्रह को कहा जाता है, जो अर्थ के लिहाज़ से ईश्वर की बात है, लेकिन शब्दों के लिहाज़ से वह रसूल की अपनी ज़बान से कही गई हो। मतलब यह कि क़ुरआन सीधे तौर पर ईश्वर का मार्गदर्शन है, जबकि हदीस परोक्ष रूप से ईश्वर का मार्गदर्शन है।

हदीस की बहुत-सी किताबें हैं। इनमें से कुछ किताबें विशेष रूप से अधिक महत्त्व रखती हैं। जैसे: सहीह अल-बुख़ारी, सहीह मुस्लिम इत्यादि। हदीस, क़ुरआन की व्याख्या और विस्तार है। क़ुरआन में ज़्यादातर बुनियादी आदेश दिए गए हैं, जिनकी विस्तृत जानकारी हदीस से मिलती है। इसी तरह सैद्धांतिक आदेशों का व्यावहारिक ढाँचा भी हदीस से ही समझा जा सकता है। इस्लाम में हदीस का इतना महत्त्व है कि इसे क़ुरआन से अलग नहीं किया जा सकता। हदीस की किताबों में जीवन के सभी पहलुओं के बारे में शिक्षाएँ और आदेश दिए गए हैं। जैसे यह कि इरादा और भावनाओं के लिहाज़ से एक मुसलमान को कैसा होना चाहिए। इबादत का विस्तृत तरीक़ा क्या है। रोज़मर्रा की ज़िंदगी में दूसरों के साथ कैसे व्यवहार करना चाहिए। भाषा का उपयोग कैसे करना चाहिए, खाने-पीने की सीमाएँ क्या हैं। परिवार व्यवस्था की संरचना कैसी होनी चाहिए, सामाजिक संबंधों की बुनियाद क्या हो। शांति और युद्ध के नियम क्या हैं, अगर मुसलमानों का कोई राज्य हो तो उसे कैसे चलाया जाए, आदि।

ऐसे तमाम मामले, जो इंसानी जीवन से जुड़े हैं और जिन पर दुनिया और परलोक की सफलता निर्भर करती है, वे सब विस्तार से हदीस के संग्रह में मौजूद हैं। हदीस के अध्ययन के बिना न तो इस्लाम का

अध्ययन पूरा होता है और न ही हदीस के बिना इस्लामी जीवन का नक्शा बनाया जा सकता है। क़ुरआन के बाद इस्लाम का सबसे बड़ा स्रोत हदीस है। जब किसी हदीस के बारे में यह साबित हो जाए कि वह पैग़म्बर इस्लाम की हदीस है, तो उसे मानना उतना ही ज़रूरी हो जाता है, जितना कि क़ुरआन को मानना।

इस्लाम

इस्लाम का मतलब आज्ञा पालन है। इस्लाम धर्म का नाम इस्लाम इसलिए रखा गया है, क्योंकि इसकी बुनियाद ईश्वर की आज्ञा मानने पर है। ‘‘मुसलमान’ वह इंसान है, जो अपनी सोच को ईश्वर के अधीन कर ले और अपने सारे काम ईश्वर की आज्ञा के अनुसार करने लगे।

इस्लाम पूरी सृष्टि का धर्म है, क्योंकि सारी सृष्टि और उसके सभी हिस्से ईश्वर के बनाए हुए नियमों का पालन कर रहे हैं। यही व्यवहार इंसान से भी अपेक्षित है। इंसान को भी उसी तरह ईश्वर का आज्ञाकारी बनकर अपनी ज़िंदगी जीनी है, जैसे बाक़ी सृष्टि पूरी तरह से ईश्वर की आज्ञा का पालन कर रही है। फ़र्क़ सिर्फ इतना है कि सृष्टि मजबूरी में ईश्वर की बात मान रही है, जबकि इंसान से यह अपेक्षित है कि वह अपनी मर्ज़ी से ईश्वर की आज्ञा-पालन करे।

जब इंसान इस्लाम को अपनाता है, तो सबसे पहले उसकी सोच इस्लाम के अधीन हो जाती है। उसके बाद उसकी इच्छाएँ, उसकी भावनाएँ, उसकी रुचियाँ, उसके संबंध, उसका प्यार और नफ़रत, सब ईश्वर की आज्ञा के अनुसार ढल जाते हैं। फिर इंसान का रोज़मर्रा का जीवन भी ईश्वर के अधीन हो जाता है। उसके दूसरों के साथ व्यवहार

और उसका लेन-देन इस्लाम के आदेशों के अनुसार हो जाते हैं। वह अंदर और बाहर से एक आज्ञाकारी इंसान बन जाता है।

इंसान ईश्वर का बंदा है। इंसान के लिए सही रास्ता यही है कि वह दुनिया में ईश्वर का बंदा बनकर रहे। इसी बंदगी की राह को इस्लाम कहते हैं। इस्लामी जीवन ईश्वर की बंदगी और अधीनता वाली ज़िंदगी है। इस्लाम यह है कि इंसान आज्ञाकारी हो और ईश्वर की वफ़ादारी और अधीनता में रहते हुए अपनी ज़िंदगी बिताए। ऐसे लोग ही ईश्वर की रहमतों में हिस्सेदार बनाए जाएँगे।

ईमान

ईमान की हक़ीक़त ज्ञान है यानी ईश्वर को जानना। जब कोई इंसान ईश्वर के अस्तित्व को पूरी समझ के साथ महसूस कर लेता है और उसे ईश्वरीय सच्चाइयों का बोध हो जाता है, तो इसे ही ईमान कहते हैं।

यह जानना कोई साधारण बात नहीं है। ईश्वर सभी चीज़ों का बनाने वाला और मालिक है। वह इनाम देने वाला है और सज़ा देने वाला भी। उसकी पकड़ से कोई नहीं बच सकता। ऐसे एक ईश्वर को जानना इंसान की पूरी ज़िंदगी को हिला देता है। उसकी सोच में एक क्रांति आ जाती है। उसके सभी भावनाओं का केंद्र ईश्वर बन जाता है।

इसका परिणाम यह होता है कि इंसान पूरी तरह से ईश्वर का आज्ञाकारी बन जाता है। ईश्वर ही उसकी सारी चिंताओं का केंद्र बन जाता है। अब वह ऐसा इंसान बन जाता है, जिसका जीना भी ईश्वर के लिए होता है और मरना भी ईश्वर के लिए।

इस ईमान का प्रभाव यह होता है कि इंसान के संस्कार और व्यवहार सभी ईश्वर के रंग में ढल जाते हैं। जब वह बोलता है, तो यह सोचकर

बोलता है कि ईश्वर उसकी आवाज़ सुन रहा है। जब वह चलता है, तो इस तरह चलता है कि उसकी चाल ईश्वर की पसंद के ख़िलाफ़ न हो। जब वह दूसरों के साथ व्यवहार करता है, तो उसे डर रहता है कि अगर उसने कुछ ग़लत किया, तो ईश्वर उसे सज़ा देगा।

इस ईमान का असर यह होता है कि इंसान की पूरी ज़िंदगी परलोक की ओर केंद्रित हो जाती है। वह हर मामले में दुनिया के बजाय परलोक को महत्त्व देता है। वह तात्कालिक लाभ के बजाय परलोक के लाभ को प्राथमिकता देता है। जब भी किसी मामले में दो पक्ष हों, एक दुनिया का और दूसरा परलोक का, तो वह हमेशा दुनिया के पक्ष को छोड़कर परलोक के पक्ष को अपनाता है।

यह ईमान उसके लिए ईश्वर पर अटूट विश्वास का स्रोत बन जाता है। वह हर स्थिति में ईश्वर पर भरोसा करता है। ईमान अपनी असलियत में सर्वशक्तिमान ईश्वर को पहचानने का नाम है, लेकिन जब यह पहचान किसी के दिल और दिमाग़ में उतरती है, तो यह उसकी पूरी शख़्सियत को एक नई शख़्सियत बना देती है। वह हर रूप से एक नया इंसान बन जाता है।

इम्तिहान

इस दुनिया में इंसान आज़ाद है। ईश्वर ने उस पर किसी तरह की पाबंदी नहीं लगाई है, लेकिन यह आज़ादी एक इम्तिहान के लिए है, न कि बेलगाम ज़िंदगी के लिए। इस आज़ादी का मतलब यह नहीं है कि इंसान जानवरों की तरह बिना किसी रोक-टोक के ज़िंदगी बिताए और फिर एक दिन मर जाए, बल्कि इसका उद्देश्य यह है कि इंसान अपने इरादे से सही ज़िंदगी जिए। वह अपने फ़ैसले से ख़ुद को ऊँचे नैतिक उसूलों का पाबंद बनाए।

इंसान को इस तरह बनाने का उद्देश्य यह है कि उसे सभी प्राणीयों में सबसे ऊँचा दर्जा दिया जा सके। उसका नाम ईश्वर के ख़ास बंदों में हो, जिन्होंने बिना किसी बाहरी दबाव के अपने आपको बा-उसूल इंसान बनाया। जिन्होंने बिना किसी ज़बरदस्ती के स्वतंत्र निर्णय से वही किया, जो उन्हें सच्चाई के लिए करना चाहिए था।

इस दुनिया में जितनी भी चीज़ें हैं, सबकी सब ईश्वर के अधीन हैं। अंतरिक्ष के तारे और ग्रह पूरी तरह से ईश्वर के आदेश के अनुसार घूमते हैं। पेड़, नदियाँ, पहाड़ और इस तरह की दूसरी तमाम चीज़ें पहले से तय किए हुए ईश्वर के नियम पर चल रही हैं। इसी तरह सामान्य जानवर भी वही करते हैं, जो उनकी प्राकृतिक प्रवृत्ति के अनुसार उनके लिए तय कर दिया गया है। दुनिया में केवल इंसान ही एक ऐसा प्राणी है जिसे अपनी मर्ज़ी और आज़ादी का वरदान दिया गया है।

इसी आज़ादी ने इंसान के सामने दो रास्ते खोल दिए हैं। अगर वह आज़ादी पाकर अहंकार, उद्दंडता और बेकाबू जीवन में पड़ जाए, तो इसका मतलब है कि वह इम्तिहान में पास नहीं हुआ। इसके बाद उसका वही अंजाम होगा, जो उन लोगों का होता है, जो किसी मुश्किल परीक्षा में फेल हो जाते हैं।

दूसरे लोग वे हैं, जो अपनी मिली हुई आज़ादी को सही इस्तेमाल करते हैं। वे मजबूर न होते हुए भी ख़ुद को ईश्वर के उसूलों का पाबंद बना लेते हैं। ये लोग परीक्षा में सफल हो गए। उन्हें ईश्वर की तरफ़ से वे इनाम दिए जाएँगे, जो किसी दूसरे प्राणी को नहीं मिले हों। वे ईश्वर के नज़दीकी बंदे कहलाएँगे, जो हमेशा के लिए सुख और आराम में रहेंगे। उन्हें ऐसी ख़ुशियाँ मिलेंगी, जो कभी समाप्त नहीं होंगी।

नियत

इस्लाम में सबसे ज़्यादा महत्त्वपूर्ण चीज़ नियत है। कोई भी काम केवल उसके बाहरी रूप के आधार पर ईश्वर के यहाँ स्वीकार नहीं होता। ईश्वर सिर्फ़ उसी काम को स्वीकार करता है, जिसे करने वाले ने सच्ची नियत से किया हो। बुरी नियत के साथ किए गए काम को ईश्वर नामंज़ूर कर देता है।

सच्ची नियत यह होती है कि काम ईश्वर के लिए किया जाए। उसे करने का उद्देश्य ईश्वर की ख़ुशी हो। इंसान जो भी काम करे, यह सोचकर करे कि इसका इनाम उसे ईश्वर के यहाँ मिलेगा। इसके विपरीत बुरी नियत यह होती है कि इंसान दिखावे के लिए धार्मिक काम करे, लेकिन उसका मक़सद दुनिया का फ़ायदा लेना हो। वह काम इसलिए करे कि लोग उसे देखकर उसकी तारीफ़ करेंगे। लोगों के बीच उसे शोहरत और प्रसिद्धि मिलेगी। वह समाज में सम्मान पाएगा।

नियत का संबंध इंसान की अंदरूनी सोच या भावना से होता है। आम लोग किसी के अंदर की सोच या भावनाओं को नहीं जान सकते, लेकिन ईश्वर को हर इंसान के भीतर का हाल पूरी तरह मालूम है। वह जानता है कि इंसान के दिमाग़ में क्या चल रहा है और उसके दिल में किस तरह की भावनाएँ हैं। किसी के काम को लेकर लोग भले ही ग़लतफ़हमी में पड़ सकते हैं, लेकिन ईश्वर को सब कुछ पता है। वह अपने ज्ञान के अनुसार हर इंसान से न्याय करेगा और हर किसी को वही इनाम देगा, जिसके वह सच में हक़दार है।

नियत की अहमियत सच्चाई और अर्थपूर्णता में होती है। जो चीज़ अपनी असली सच्चाई या मूल अर्थ को खो देती है, वह बेकार हो जाती है। उसी तरह, जो काम बुरी या अधूरी नियत से किया जाए,

उसकी कोई क़ीमत नहीं होती। उसकी कोई भी अहमियत न इंसानों के सामने हो सकती है और न ईश्वर के सामने। किसी चीज़ की क़ीमत तभी होती है, जब वह शुद्ध हो, जिसमें किसी भी चीज़ की मिलावट न हो। सच्ची नियत से किया गया काम शुद्ध होता है। सच्ची नियत के बिना किया गया काम अशुद्ध होता है।

परलोक

इंसान एक अनंत जीवन वाला प्राणी है, लेकिन उसकी उम्र को ईश्वर ने दो हिस्सों में बाँट दिया है। उसकी उम्र का बहुत छोटा हिस्सा इस दुनिया में रखा गया है और उसका बाक़ी सारा हिस्सा मौत के बाद परलोक में होगा। यह दुनिया काम करने की जगह है, जबकि परलोक की दुनिया हमारे कर्मों का परिणाम पाने की जगह है।

यह दुनिया अधूरी है और परलोक की दुनिया हर दृष्टि से संपूर्ण है। परलोक एक अनंत दुनिया है, जहाँ सारी चीज़ें अपने सर्वोत्तम रूप में मौजूद होंगी ।ईश्वर ने स्वर्ग को इसी परलोक की दुनिया में रखा है। स्वर्ग हर तरह की ख़ुशियों और वरदानों से भरी हुई है। जो लोग इस दुनिया में अच्छे काम करेंगे और ईश्वर को मानकर चलेंगे, वे परलोक की दुनिया में ऐसे दाख़िल होंगे कि स्वर्ग के दरवाज़े उनके लिए हमेशा के लिए खोल दिए जाएँगे।

लेकिन जो लोग इस दुनिया में ईश्वर को भूल जाएँ या उसके ख़िलाफ़ बग़ावत करें, वे ईश्वर के नज़दीक अपराधी माने जाएँगे। ऐसे लोग परलोक की ख़ुशियों से वंचित रह जाएँगे।

इस दुनिया में ईश्वर अदृश्य है। परलोक में वह अपनी पूरी शक्ति के साथ सामने आ जाएगा। उस समय सभी इंसान ईश्वर के सामने झुक

जाएँगे, लेकिन उस समय झुकना किसी के काम नहीं आएगा। ईश्वर के सामने झुकना तभी फ़ायदेमंद है, जब यह झुकाव देखने से पहले इस दुनिया में हो। परलोक में ईश्वर को देख लेने के बाद झुकना किसी काम न आएगा।

मौत इंसान की ज़िंदगी का अंत नहीं है। यह तो अगले जीवन या दूसरे चरण की शुरुआत है। मौत वह मध्य चरण है, जब इंसान आज की अस्थायी दुनिया से निकलकर कल की स्थायी दुनिया में पहुँच जाता है। वह इस दुनिया के अस्थायी ठिकाने से निकलकर परलोक की अनंत आरामगाह में दाख़िल हो जाता है। परलोक का यह चरण हर इंसान की ज़िंदगी में निश्चित रूप से आएगा। कोई भी परलोक की इस पेशी से बच नहीं सकता।

स्वर्ग और नर्क

स्वर्ग ईश्वर के इनाम की जगह है और नर्क वह जगह है, जहाँ उन लोगों को डाला जाएगा जिनके लिए ईश्वर की अदालत में सज़ा का फ़ैसला हुआ हो। इस दुनिया में हर तरह की नेमतें (वरदान, उपहार, blessings) हैं, लेकिन वे अधूरी और असंपूर्ण रूप में हैं। स्वर्ग वह जगह है, जहाँ ये सारी नेमतें अपनी पूर्ण और उत्तम अवस्था में होंगी। मौजूदा दुनिया एक अधूरी दुनिया है, जबकि स्वर्ग की दुनिया पूरी तरह से एक उत्कृष्ट दुनिया होगी। जो लोग इस दुनिया की परीक्षाओं में सफल होंगे, वे स्वर्ग की अनंत दुनिया में प्रवेश करेंगे, जहाँ उन्हें सिर्फ़ सुख और आनंद मिलेगा।

स्वर्ग में इंसान को भौतिक सुख-सुविधाओं के साथ मानसिक शांति और दिली सुकून भी पूरी तरह से मिलेगा। वहाँ भौतिक सुख-सुविधाओं

की भरपूर व्यवस्था होगी और उन सभी समस्याओं को समाप्त कर दिया जाएगा, जो इस दुनिया में चिंता और परेशानी का कारण बनती हैं, जैसे: बुढ़ापा, बीमारी, हादसे, मौत आदि।

हर इंसान स्वाभाविक रूप से एक आदर्श दुनिया की तलाश में रहता है। हर व्यक्ति अपने सपनों में एक बेहतरीन दुनिया की कल्पना करता है। यह दुनिया इस जीवन में किसी को नहीं मिलती। मौत के बाद यह आदर्श दुनिया उन सौभाग्यशाली लोगों को मिलेगी जिन्होंने अपनी मौत से पहले की ज़िंदगी में इसके योग्य बनकर दिखाया हो।

नर्क का मामला इसके ठीक विपरीत है। स्वर्ग अगर हर तरह के सुख की जगह है, तो नर्क हर तरह की पीड़ा की जगह है। स्वर्ग अगर ब्रह्मांड का फूल है, तो नर्क इस ब्रह्मांड का काँटा है। जो लोग इस दुनिया में ईश्वर की इच्छा को छोड़कर अपनी इच्छाओं पर चलते हैं, जो नैतिक सीमाओं को तोड़ते हैं और विद्रोही रवैया अपनाते हैं, जो न तो ईश्वर का हक़ अदा करते हैं और न इंसानों का, ऐसे लोग मौत के बाद नर्क में डाल दिए जाएँगे, ताकि वे अनंत काल तक अपनी बुरे कर्मों की सज़ा भुगतें। नर्क में उन लोगों को बचाने के लिए कोई मददगार नहीं होगा। उनके सभी मददगार उनका साथ छोड़ देंगे। वहाँ कोई नहीं होगा, जो ईश्वर के फ़ैसले को उन पर लागू होने से रोक सके।

रूहानियत

रूहानियत क्या है? ईश्वर ने इसे हमेशा के लिए गुलाब के पौधे के रूप में दिखाया है। गुलाब के पौधे में काँटे भी होते हैं और फूल भी। नुकीले काँटों के साथ, ईश्वर उसी शाखा में एक ऐसा फूल उगाता है, जिसमें महक होती है, जिसमें रंग होता है और जो अपनी ख़ुशबू से दूर-दूर तक लोगों को महक देता है।

यह रूहानियत का प्राकृतिक उदाहरण है। रूहानियत का मतलब है काँटों के बीच में फूल बनकर रहना। रूहानियत यह है कि इंसान जीवन के काँटों में उलझे नहीं। वह भड़काने वाली बातों पर भड़के नहीं। अप्रिय अनुभव उसके संतुलन को बिगाड़ न दे। दूसरों का बुरा व्यवहार उसके अंदर ग़ुस्सा और बदले की भावना न पैदा करे। वह अपने सिद्धांतों के अनुसार जिए। उसकी मानसिक अवस्था इतनी ऊँची हो चुकी हो कि पत्थर मारने वाले का पत्थर उसे छू भी न सके।

क़ुरआन में रूहानियत को रब्बानियत कहा गया है यानी रब के साथ जीना, रब वाला बनकर रहना। जो लोग इंसानी झगड़ों में फँसे रहते हैं, वे आस-पास की बातों से प्रभावित होते रहते हैं। ऐसे लोगों की रूहानियत कभी नहीं बढ़ती, लेकिन जो इंसान अपने आपको इतना ऊपर उठा लेता है कि वह अपने विचारों और सोच में रब्बानी स्तर पर जीने लगता है, वह लोगों की बातों से बेपरवाह हो जाता है। रब्बानियत की अवस्था में वह इतनी बड़ी चीज़ पा लेता है कि बाक़ी सारी चीज़ें उसकी नज़र में छोटी हो जाती हैं।

ऐसे इंसान के अंदर यह ताक़त आ जाती है कि वह गाली सुनकर भी मस्कुरा दे। वह ग़ुस्सा दिलाने वाली बात को भूल जाए। वह काँटे का स्वागत फूल के रूप में कर सके। रूहानी इंसान अपनी रूहानियत या रब्बानियत के कारण इतनी बड़ी चीज़ पा लेता है कि उसके बाद उसे किसी और चीज़ की इच्छा नहीं रहती। यह चीज़ उसके अंदर ईर्ष्या, स्वार्थ और दूसरों का शोषण करने की भावना को समाप्त कर देती है। वह इतना अधिक पा लेता है कि उसके बाद कुछ और पाने की कोई आवश्यकता नहीं बचती। यही वे लोग होते हैं, जिनसे ऐसा समाज बनता है, जो सूरज की तरह चमकता है और बाग़ की तरह खिलता है।

तक़्वा

‘तक़्वा’ का मतलब है परहेज़गारी यानी दुनिया में सतर्कता और परहेज़ के साथ जीवन बिताना। सतर्क जीवन को ‘मुत्तक़ियाना’ जीवन कहते हैं और असतर्क जीवन को ‘ग़ैर-मुत्तक़ियाना’ जीवन। दुसरे ख़लीफ़ा हज़रत उमर फ़ारूक़ ने अपने एक साथी से पूछा कि तक़्वा क्या है। उन्होंने कहा, “ऐ अमीर-उल-मोमिनीन, क्या आप कभी ऐसे रास्ते से गुज़रे हैं, जिसके दोनों ओर झाड़ियाँ हों?” सहाबी ने फिर पूछा, “ऐसे समय में आपने क्या किया?” उन्होंने जवाब दिया, “मैंने अपने कपड़े समेट लिए और अपने आपको बचाते हुए वहाँ से गुज़र गया।” सहाबी ने कहा, “यही तक़्वा है।”

यह दुनिया एक परीक्षा की जगह है। यहाँ इंसान की परीक्षा के लिए तरह-तरह के काँटे बिखरे हुए हैं। कहीं नकारात्मक भावनाओं का तूफ़ान है। कहीं धूर्त लोगों द्वारा छेड़े गए मुद्दे हैं। कहीं दुनिया की चमक-दमक इंसान को अपनी ओर खींचना चाहती है। कहीं ऐसी अप्रिय परिस्थितियाँ हैं, जो इंसान के मन को विचलित करके उसे अच्छे रास्ते से भटका देती हैं।

ये सारी चीज़ें जैसे जीवन के रास्ते के दोनों ओर काँटेदार झाड़ियों की तरह खड़ी हैं। हर पल यह डर रहता है कि कहीं इंसान का दामन इनसे उलझ न जाए और फिर वह आगे बढ़ने के बजाय इन्हीं में फँसकर रह जाए।ऐसी स्थिति में बुद्धिमान वही है, जो दुनिया का रास्ता इस तरह तय करे कि उसका दामन सुरक्षित रहे। वह ग़लत चीज़ों से उलझने के बजाय उनसे बचकर आगे बढ़ जाए। हर हाल में उसका मन यह सोचता रहे कि उसे अपने आपको सँभालना है। उसे बचाव का तरीक़ा अपनाना है, न कि उलझने का तरीक़ा।

इंसान को सही स्वभाव के साथ पैदा किया गया है। अगर कोई रुकावट न हो, तो हर इंसान अपने आप सही दिशा में चल सकता है। इसलिए सबसे बड़ी कोशिश यही होनी चाहिए कि इंसान अप्राकृतिक रुकावटों को अपने लिए बाधा न बनने दे। इसके बाद वह अपनी प्रकृतिक ताक़त से सही रास्ता अपनाएगा, जब तक कि वह अपने रब से न मिल जाए।

शुक्र

शुक्र यह है कि इंसान ईश्वर की दी हुई नेमतों (वरदान, उपहार, blessings) को माने और उनका एहसास करे। यह एहसास सबसे पहले दिल में पैदा होता है और फिर शब्दों में बदलकर इंसान की ज़ुबान पर आता है। ईश्वर ने इंसान को बेहतरीन शरीर और दिमाग़ के साथ पैदा किया। उसकी ज़रूरत की हर चीज़ बहुतायत में दी। ज़मीन और आसमान की हर चीज़ को इंसान की सेवा में लगा दिया। धरती पर जीवन बिताने और सभ्यता बनाने के लिए जिन चीज़ों की ज़रूरत थी, वे सब यहाँ भरपूर मात्रा में दी गईं।

इंसान हर पल इन नेमतों का अनुभव करता है। इसलिए इंसान पर यह ज़रूरी है कि वह हर पल ईश्वर की नेमतों पर शुक्र करे। उसका दिल ईश्वर की दी हुई नेमतों के एहसास से भरा रहे। शुक्र की असल हक़ीक़त अभिस्वीकार करना (acknowledge) है। जिस चीज़ को इंसान के मामले में अभिस्वीकार कहा जाता है, वही बात ईश्वर के संदर्भ में शुक्र कहलाती है। 'अभिस्वीकार' का शब्द इंसान के संदर्भ में इस्तेमाल होता है, जबकि 'शुक्र' का शब्द ईश्वर के। शुक्र हर इबादत का सार है। इबादत के सभी रूप दरअसल शुक्र के भाव की व्यावहारिक तस्वीरें हैं।

शुक्र सबसे अधिक व्यापक और सबसे अधिक संपूर्ण इबादत है। शुक्र ईश्वर को मानने वाले जीवन का सार है।

शुक्र का संबंध इंसान के पूरे अस्तित्व से है। सबसे पहले इंसान अपने दिल और दिमाग़ में शुक्र के एहसास को जागृत करता है। फिर वह अपनी ज़ुबान से बार-बार इसका इज़हार करता है। उसके बाद जब शुक्र का भाव मज़बूत हो जाता है, तो इंसान अपने धन और संपत्ति को शुक्र के इज़हार के रूप में ईश्वर की राह में ख़र्च करने लगता है। इसी तरह उसका शुक्र का भाव उसे मजबूर करता है कि वह अपने समय और ताक़त को उस ईश्वर की सेवा में लगाए, जिसने उसे यह समय और ताक़त दी है। हमारा पूरा अस्तित्व ईश्वर का दिया हुआ है। हम एक ऐसी दुनिया में रहते हैं, जो पूरी तरह से ईश्वर की देन है। इसी सच्चाई को मानने और प्रकट करने को शुक्र कहते हैं।

ज़िक्र

इस्लाम की एक बुनियादी शिक्षा 'ज़िक्र' है। ज़िक्र का मतलब है याद करना यानी ईश्वर को याद करना। ईश्वर को भूलने की अवस्था को ग़फ़लत कहते हैं और ईश्वर को याद रखने की अवस्था को ज़िक्र।

ज़िक्र एक प्राकृतिक सच्चाई है। इंसान हर पल उन चीज़ों का अनुभव करता है, जिनका सीधा संबंध ईश्वर से है। वह सूरज और चाँद, नदियाँ और पहाड़, हवा और पानी को देखता है, जो सभी ईश्वर की बनाई हुई चीज़ें हैं। इसी तरह सभी जीव-जंतु, जो इंसान के सामने आते हैं, वे सभी उसे बनाने वाले की याद दिलाते हैं। धरती से लेकर आसमान तक जो चीज़ें हैं, वे सभी ईश्वर की सुंदरता और महानता

का प्रदर्शन हैं। वे अपने पूरे अस्तित्व के साथ ईश्वर के अस्तित्व का परिचय देती हैं।

जिस दुनिया में इंसान रहता है और जिन चीज़ों के बीच वह सुबह-शाम अपना जीवन बिताता है, वे हर पल उसे ईश्वर की ओर ध्यान दिलाती हैं। इन चीज़ों से प्रभावित होकर उसके दिल और दिमाग़ में हर समय ईश्वर की याद जागती है। इन्हीं भावनाओं के शब्दों में प्रकट होने को ज़िक्र कहते हैं।

इसी तरह इंसान अपनी ज़िंदगी में बार-बार ईश्वर से संबंध का अनुभव करता है। जब वह अपने अस्तित्व पर सोचता है, तो उसका दिल इस एहसास से भर जाता है कि ईश्वर ने उसे सुंदरता और श्रेष्ठता के साथ बनाया और हर प्रकार की उच्च क्षमताएँ भरपूर मात्रा में दीं। ये एहसास उसकी ज़ुबान पर अलग-अलग तरीक़ों से आते रहते हैं। यह भी ज़िक्र का एक रूप है।

इसी तरह इंसान को अपनी रोज़मर्रा की ज़िंदगी में कई प्रकार के उतार-चढ़ाव देखने को मिलते हैं। वह अलग-अलग प्रकार के सुखद और दुखद अनुभवों से गुज़रता है। इन अनुभवों के दौरान वह बार-बार ईश्वर की ओर ध्यान करता है। बार-बार वह अलग-अलग शब्दों में ईश्वर को याद करता है।

इसी तरह रोज़ाना की इबादतों के बीच वह विभिन्न शब्दों को अपनी ज़ुबान से अदा करता है। ये शब्द कभी क़ुरआन और हदीस से लिए हुए होते हैं और कभी ईश्वर की महानता को मानते हुए अनायास (spontaneously) उसकी ज़ुबान से निकलते हैं। यह सब ईश्वर का 'ज़िक्र' है।

नमाज़

नमाज़ ईश्वर की इबादत है। यह रोज़ाना पाँच वक़्त के लिए अनिवार्य (फ़र्ज़) है। समूह (congregation) के साथ नमाज़ की अदायगी के लिए इसका इंतज़ाम मस्जिदों में किया जाता है। नमाज़ में सबसे पहले वुज़ू किया जाता है। वुज़ू चेहरा, हाथ और पैर को पानी से धोने की प्रक्रिया है। नमाज़ी के अंदर यह एहसास जगाता है कि वह हमेशा पवित्र जीवन गुज़ारेगा। फिर वह 'अल्लाहु अकबर' (ईश्वर सबसे बड़ा है) कहकर नमाज़ शुरू करता है। इस तरह वह स्वीकार करता है कि महानता सिर्फ एक ईश्वर के लिए है। आदमी के लिए सही रवैया यह है कि वह छोटा और विनम्र बनकर दुनिया में रहे।

नमाज़ में आदमी क़ुरआन के कुछ हिस्सों को पढ़कर अपने बारे में ईश्वर के आदेश को दिमाग़ में ताज़ा करता है। फिर वह रुकू और सजदा (नतमस्तक) करके इस अमल की भाषा में यह कहता है कि मेरे लिए सिर्फ एक ही तरीक़ा सही है और वह यह कि मैं ईश्वर का अनुयायी बनकर दुनिया में जीवन बिताऊँ।

नमाज़ का अमल जब समाप्त होता है तो सभी नमाज़ी दाएँ और बाएँ मुँह फेरकर कहते हैं: 'अस्सलामु अलैकुम व रहमतुल्लाह' (तुम पर सलामती और ईश्वर की रहमत हो)। यह इस बात की घोषणा है कि नमाज़ के ज़रिए शिक्षा पाकर अब सभी नमाज़ी इस तरह दुनिया में प्रवेश कर रहे हैं कि उनके दिल में दूसरों के लिए दया और शांति के अलावा कोई दूसरा भावना नहीं है। वे समाज के शांति-प्रिय सदस्य बनकर रहेंगे। वे किसी के साथ बुरी भावना से काम नहीं करेंगे।

नमाज़ एक प्रकार से ईश्वर की इबादत है। यह ईश्वर की ईश्वरीयता का अभिस्वीकार करना है। यह हर प्रकार की महानता को सिर्फ ईश्वर के लिए समर्पित करते हुए उसके सामने झुक जाने का प्रतीक है।

दूसरे नज़रिए से, नमाज़ इंसान को इस योग्य बनाती है कि वह लोगों के बीच सच्चा इंसान बनकर रहे। वह लोगों के साथ व्यवहार करते समय विनम्रता और सहानुभूति का रवैया अपनाए। नमाज़, ईश्वर के साथ नमाज़ी के रिश्ते को भी दुरुस्त करती है और इंसान के साथ उसके रिश्ते को भी।

रोज़ा

रोज़ा एक साल में एक बार की जाने वाली इबादत है। यह हर साल रमज़ान के पूरे एक महीने तक रखा जाता है। रोज़े में इंसान ईश्वर के आदेश के अनुसार भोर से लेकर सूरज डूबने तक खाने-पीने से रुक जाता है और अपने आपको ज़्यादा-से-ज़्यादा ज़िक्र और इबादत में व्यस्त करता है। रोज़ा रखने का उद्देश्य यह है कि इंसान की भौतिकता कम हो और उसकी आध्यात्मिकता बढ़े। वह दुनिया में एक आध्यात्मिक जीवन बिताने के योग्य बन जाए।

रोज़ा इंसान के अंदर आभार (शुक्र) की भावना जगाता है। भूख और प्यास सहन करने से उसे इन नेमतों की अहमियत का पता चलता है। फिर जब वह शाम को भूख और प्यास के बाद खाना और पानी ग्रहण करता है, तो उसे महसूस होता है कि खाना और पानी कितनी क़ीमती चीज़ें हैं, जो उसे ईश्वर ने दी हैं। यह अनुभव उसके आभार के एहसास को बहुत बढ़ा देता है।

रोज़ा इंसान के अंदर नैतिक अनुशासन पैदा करता है। कुछ चीज़ों पर रोक लगाकर उसे यह सिखाया जाता है कि दुनिया में उसे एक अनुशासित जीवन जीना है, न कि बे-लगाम। रोज़ा एक तरह का स्पीड ब्रेकर है। एक महीने के लिए नियंत्रण लगाकर रोज़ा यह संदेश देता है

कि इंसान को पूरे साल और पूरी उम्र इसी तरह संयम के साथ जीवन बिताना है। उसे ईश्वर की निर्धारित सीमाओं से बाहर जाने की कोशिश नहीं करनी चाहिए।

रोज़ा रखकर इंसान अपने आपको ज़्यादा-से-ज़्यादा ज़िक्र, इबादत और क़ुरआन पड़ने में व्यस्त करता है। यह ईश्वरीय कार्यों के प्रभाव को बढ़ाने की एक योजना है। इस तरह इंसान ज़िक्र, इबादत और क़ुरआन की शिक्षाओं के प्रभाव को और अधिक गहराई से स्वीकार करता है।

रोज़ा एक प्रशिक्षण कोर्स है। इसका उद्देश्य यह है कि एक महीने की विशेष ट्रेनिंग देकर इंसान को इस योग्य बनाया जाए कि वह पूरे साल ईश्वर को मानने वाला और इंसानियत से प्रेम करने वाला व्यक्ति बनकर जीवन बिता सके।

ज़कात

ज़कात का मतलब है वह निर्धारित राशि, जो एक संपन्न व्यक्ति साल के अंत में अपनी संपत्ति से निकालता है। इस तरह वह अपनी कमाई को शुद्ध करता है। एक छोटा हिस्सा ईश्वर की राह में देकर बाक़ी हिस्सा वह अपने लिए सही तरीक़े से उपयोग में लाने के लायक बना लेता है।

अपनी कमाई में से ज़कात की राशि निकालना इस बात का व्यवहारिकता स्वीकार करना है कि असली देने वाला ईश्वर है। जब देने वाला ईश्वर है, तो इंसान को चाहिए कि उसके दिए हुए में से ईश्वर की राह में ख़र्च करे। ज़कात का नियम यह है कि संपन्न लोगों से लेकर इसे ज़रूरतमंदों में बाँटा जाए। यह धन के प्रवाह में असमानता को दोबारा

संतुलित करने का एक तरीक़ा है। इस तरह संपन्न लोगों को यह याद दिलाया जाता है कि उन पर उन लोगों का आर्थिक अधिकार है, जिन्हें वितरण में कम हिस्सा मिला या बिलकुल नहीं मिला।

ज़कात का संबंध नैतिकता से भी जुड़ा हुआ है। ज़कात एक तरफ़ देने वाले के अंदर से कंजूसी और स्वार्थ की भावनाओं को निकालती है। यह देने वाले के दिल में उदारता और इंसानियत की भावना पैदा करती है। दूसरी तरफ़, ज़कात पाने वाले के लिए यह फ़ायदा है कि वह दूसरों को अपना भाई और दुख-सुख का साथी समझने लगे। उसके दिल में दूसरों के प्रति ईर्ष्या की भावना न उभरे, बल्कि इसके बजाय उसके दिल में दूसरों के लिए प्रेम की भावना जागे।

क्योंकि ज़कात ईश्वर की राह में दी जाती है, इसलिए यह दूसरी इबादतों की तरह एक इबादत है। बाहरी रूप से यह इंसानों के बीच बाँटी जाती है, लेकिन अपनी सच्चाई के अनुसार यह इंसान को ईश्वर से जोड़ने वाली है। यह इंसान को ईश्वर के करीब लाने का एक माध्यम है। ज़कात स्पिरिट में इबादत है और अपनी बाहरी सूरत में सेवा।

हज

हज एक इबादत है। यह उन लोगों पर जीवन में एक बार अनिवार्य है, जो इसकी क्षमता रखते हैं। जिनके पास यह क्षमता नहीं है, उनके ऊपर हज अनिवार्य नहीं है।

हज में व्यक्ति अपने देश से निकलकर हिजाज़ (सऊदी अरब) जाता है। वहाँ वह मक्का में प्रवेश करके काबा की परिक्रमा करता है। वह सफ़ा और मरवा नाम की दो पहाड़ियों के बीच सई (दौड़) करता

है। अराफ़ात में ठहरता है। जमार (शैतान के बुत) पर पत्थर मारता है। क़ुर्बानी करता है। इस तरह की विभिन्न इबादत की रस्में हज के महीने में अदा की जाती हैं। इसे ही हज कहते हैं।

हज एक व्यक्ति के द्वारा अपने आपको अपने रब को समर्पित करने का प्रतीक है। इन कर्मों के माध्यम से व्यक्ति यह संकल्प लेता है कि वह अपने आपको ईश्वर के लिए समर्पित कर रहा है। उसकी ज़िंदगी सिर्फ़ ईश्वर के चारों ओर घूमेगी। वह ईश्वर के लिए हर प्रकार की क़ुर्बानी देने को तैयार रहेगा।

हज के दौरान व्यक्ति काबा के निर्माता हज़रत इब्राहीम और उनके बेटे हज़रत इस्माईल को याद करता है। वह पैग़म्बर-ए-इस्लाम की ऐतिहासिक स्मृतियों को देखता है। वह अपने कुछ दिन उस वातावरण में बिताता है, जहाँ इस्लाम का प्रारंभिक इतिहास बना था। इस तरह हज एक व्यक्ति को ईश्वर से और उसके पैग़म्बरों से जोड़ने का माध्यम बन जाता है। यह व्यक्ति को ईश्वर के नेक बंदों की ज़िंदगी की याद दिलाता है और इस्लाम के इतिहास से जीवंत संबंध स्थापित करने का साधन बनता है।

साथ ही हज पूरी दुनिया के मुसलमानों को एकजुट करता है। यह दुनिया-भर के मुसलमानों के दिलों में यह सच्चाई ताज़ा करता है कि उनकी जातियाँ और उनकी राष्ट्रीयताएँ भले ही अलग-अलग हों, लेकिन एक ईश्वर पर विश्वास उनके वैश्विक एकता की मज़बूत बुनियाद है। देश की दृष्टि से वे भले ही कितने भिन्न हों, लेकिन एक ईश्वर के उपासक होने के नाते वे सभी एक हैं और हमेशा एक रहेंगे। हज वास्तव में ईश्वर की इबादत है, लेकिन व्यावहारिक रूप से इसमें कई सामुदायिक लाभ भी शामिल होते हैं। इन्हीं में से एक सामुदायिक एकता है।

नैतिकता

नैतिकता का मतलब है आपसी व्यवहार। नैतिकता उस बर्ताव का नाम है, जो एक इंसान रोज़मर्रा की ज़िंदगी में दूसरे इंसान के साथ करता है। इस नैतिकता का सिद्धांत क्या होना चाहिए? इसका सरल सिद्धांत यह है: तुम दूसरों के लिए वही चाहो, जो तुम अपने लिए चाहते हो। तुम दूसरों के साथ वैसा ही व्यवहार करो, जैसा तुम अपने लिए पसंद करते हो।

हर व्यक्ति जानता है कि वह मीठी बातों को पसंद करता है। इसलिए हर व्यक्ति को चाहिए कि वह दूसरों से मीठे लहजे में बात करे। हर व्यक्ति यह चाहता है कि कोई उसकी राह में रुकावट न डाले। इसलिए हर व्यक्ति को चाहिए कि वह दूसरों की राह में रुकावट न डाले। हर व्यक्ति यह चाहता है कि दूसरे लोग उसके साथ सहानुभूति और सहयोग का व्यवहार करें। इसलिए हर व्यक्ति को यह प्रयास करना चाहिए कि जब भी वह दूसरों से मिले, तो वह सहानुभूति और सहयोग से पेश आए।

नैतिकता का यह मापदंड अत्यंत सरल और स्वाभाविक है। यह इतना आसान है कि हर व्यक्ति इसे समझ सकता है, चाहे वह पढ़ा-लिखा हो या अनपढ़। यहाँ तक कि एक अंधा या विकलांग व्यक्ति भी आसानी से यह समझ सकता है कि कौन-सी चीज़ उसके लिए पसंदीदा है और कौन-सी नापसंद। हदीस में कहा गया है कि सबसे अच्छा व्यक्ति वह है, जिसका नैतिक आचरण सबसे अच्छा हो। इसके अनुसार, एक अच्छा इंसान बनना कोई रहस्यमय बात नहीं है। इसका सरल फ़ॉर्मूला यह है कि व्यक्ति ख़ुद को दोहरे मापदंड से बचाए। ऐसा करने के बाद वह ख़ुद-ब-ख़ुद उच्च नैतिक गुणों का मालिक बन जाएगा।

इस हदीस ने इंसानी नैतिकता का ऐसा मापदंड दिया है, जिसे कोई भी व्यक्ति आसानी से समझ सकता है। इस तरह इस्लाम ने हर व्यक्ति को उसके अपने अनुभव की रोशनी में यह बता दिया है कि उसे दूसरों से कैसा व्यवहार करना चाहिए और कैसा नहीं करना चाहिए।

सब्र

सब्र का मतलब है रुकना, अपने आपको संभालना। इंसान का उद्देश्य यह है कि वह ऊँचे आदर्शों के अनुसार दुनिया में जीवन बिताए, लेकिन दुनिया में हर क़दम पर ऐसी अप्रिय बातें सामने आती हैं, जो इंसान को उकसा सकती हैं, जो उसके लक्ष्य को असली मकसद से भटकाकर दूसरी दिशा में ले जा सकती हैं।

ऐसी स्थिति में यदि इंसान हर उकसाने वाली बात पर भड़क उठे, हर विपरीत चीज़ से उलझ जाए, तो वह अपने मकसद की ओर अपना सफर जारी नहीं रख पाएगा। वह गैर-ज़रूरी चीज़ों में उलझकर रह जाएगा।

इस समस्या का एकमात्र समाधान सब्र है। सब्र का मतलब है कि जब इंसान को कोई कड़वा अनुभव हो, तो वह भड़कने के बजाय सहनशीलता का तरीक़ा अपनाए। वह झटके को सहते हुए सच्चाई के रास्ते पर आगे बढ़ जाए।

सब्र एक ओर बाहरी दुनिया में आने वाली समस्याओं का व्यावहारिक समाधान है, दूसरी ओर यह इंसान के लिए उसकी शख़्सियत को निखारने का माध्यम है। जो इंसान सब्र नहीं करता, उसकी शख़्सियत नकारात्मक प्रवृत्तियों के बीच विकसित होती है। जबकि जो

इंसान सब्र करता है, उसकी शख़्सियत सकारात्मक प्रवृत्तियों के बीच विकसित होती है।

सब्र का मतलब पीछे हटना नहीं है। सब्र का अर्थ है कि जोश की राह छोड़कर होश की राह पकड़ना। सब्र यह है कि इंसान नाज़ुक मौक़ों पर अपने भावनाओं को संभाले। वह अपनी समझदारी का उपयोग करके ज़्यादा फायदेमंद दिशा में अपने कार्य का क्षेत्र चुन ले।

यह दुनिया ऐसी बनी है कि यहाँ हर इंसान को अवश्य ही नापसंद बातों का सामना करना पड़ता है। उसे ऐसे दृश्य देखने पड़ते हैं, जो उसे पसंद नहीं होते। उसे ऐसी आवाज़ें सुननी पड़ती हैं, जो उसके कानों को नापसंद लगती हैं। ऐसी स्थिति में उलझने का तरीक़ा अपनाने को असहनशीलता कहते हैं और अनदेखी का तरीक़ा अपनाने को सब्र कहते हैं। इस दुनिया में सफलता केवल उन्हीं लोगों को मिलती है, जो नापसंद परिस्थितियों में सब्र का तरीक़ा अपनाते हैं।

सच बोलना

मुसलमान एक सच्चा इंसान होता है। वह हमेशा सच बोलता है। वह हर मामले में वही बात कहता है, जो वास्तव में सही होती है। मुसलमान यह सहन नहीं कर सकता कि वह झूठ बोले या सच को छुपाए। सच बोलने का मतलब यह है कि इंसान के ज्ञान और उसके बोले गए शब्दों में विरोधाभास न हो। वह जो जानता है, वही बोले और जो बोलता है, वह वही हो, जो उसके ज्ञान में है। इसके विपरीत, झूठ यह है कि इंसान का ज्ञान उसे एक बात बताता हो, लेकिन वह अपनी ज़बान से कोई और बात कहे।

सच्चाई मुसलमान के चरित्र का सबसे ऊँचा गुण है। मुसलमान एक बा-उसूल इंसान होता है और बा-उसूल इंसान के लिए यही एकमात्र सही तरीका है कि वह जब भी बोले, सच ही बोले। सच्चाई के ख़िलाफ़ बोलना उसके लिए किसी भी स्थिति में संभव नहीं है।

ईश्वर की पूरी दुनिया सच्चाई पर आधारित है। यहाँ हर चीज़ ख़ुद को उसी रूप में प्रकट करती है, जो वास्तव में उसका रूप है। सूरज, चाँद, नदियाँ, पहाड़, पेड़, तारे और ग्रह सभी सच पर कायम हैं। वे ख़ुद को वैसा ही दिखाते हैं, जैसे कि वे वास्तव में हैं। ईश्वर की विशाल दुनिया में कोई भी चीज़ झूठ पर आधारित नहीं है। ऐसी कोई चीज़ नहीं है, जिसकी असलियत कुछ और हो और वह अपने आपको किसी और रूप में प्रस्तुत करे।

यही प्रकृति का स्वभाव है, जो ब्रह्मांडीय स्तर पर फैला हुआ है। मुसलमान भी इसी स्वभाव का पालन करने वाला होता है। वह झूठ और दोहरी ज़िंदगी से पूरी तरह मुक्त होता है। मुसलमान पूरी तरह से सच्चाई में ढला होता है। उसे देखकर ही यह महसूस होता है कि वह अंदर से बाहर तक एक सच्चा इंसान है।

सच बोलना मुसलमान के लिए केवल एक नीति नहीं, बल्कि उसका धर्म है। सच्चाई के मामले में समझौता करना उसके लिए संभव नहीं है। वह सच बोलता है, क्योंकि इसके बिना वह जीवित नहीं रह सकता। वह सच बोलता है, क्योंकि वह जानता है कि सच न बोलना अपनी पहचान को मिटाना है और अपनी पहचान को मिटाना किसी के लिए भी संभव नहीं है।

वादा

सामाजिक जीवन में आपसी मामलों में अक्सर ऐसा होता है कि एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से कोई वादा करता है। यह वादा दिखने में दो व्यक्तियों या दो समूहों के बीच होता है, लेकिन इसमें एक तीसरा पक्ष भी होता है और वह है ईश्वर, जो गवाह के रूप में हमेशा उसमें मौजूद रहता है। इसीलिए हर वादा एक ईश्वरीय वादा बन जाता है।

इसी वजह से मुसलमान वादे के मामले में बेहद संवेदनशील होता है। उसे यह विश्वास होता है कि हर वादा, जो दो लोगों के बीच किया जाता है, वह ईश्वर की निगरानी में होता है और उसका हिसाब ईश्वर के पास होगा। यह विश्वास उसे मजबूर करता है कि वह वादे के मामले में बहुत ज़िम्मेदारी से पेश आए। जब वह किसी से वादा करता है, तो उसे पूरा करना अनिवार्य समझता है।

जिस समाज में लोग इस गुण के धनी हों कि वे अपने वादे ज़रूर निभाएँ, उस समाज का हर व्यक्ति भरोसेमंद और पूर्वानुमान (predictable character) योग्य बन जाता है। ऐसे समाज में वह ख़ास गुण आ जाता है, जो पूरे ब्रह्मांड में व्यापक रूप से मौजूद है। इस ब्रह्मांड का हर तत्व सटीकता से अपने कार्य करता है। जैसे ग्रहों और सितारों की गति के बारे में पहले से पता होता है कि वे सौ साल बाद या हज़ार साल बाद कहाँ होंगे। इसी तरह, पानी के बारे में पहले से पता है कि वह किस तापमान पर उबलेगा। इस तरह पूरा ब्रह्मांड भरोसेमंद और पूर्वानुमान योग्य बन गया है।

जिस समाज में लोग वादे निभाने वाले हों, उस समाज में अपने आप कई अन्य अच्छाइयाँ विकसित होने लगती हैं। जैसे, ऐसे समाज में लेन-देन के झगड़े नहीं होते। वहाँ परस्पर विश्वास का माहौल बन जाता

है। हर व्यक्ति शांत रहता है, क्योंकि उसे यह डर नहीं होता कि कोई वादा तोड़ने की घटना होगी। वादे को निभाना उच्चतम नैतिक गुण है और ईमान इंसान को इसी उच्चतम नैतिक गुण का मालिक बनाता है।

सफ़ाई

मुसलमान एक पवित्र इंसान होता है। सबसे पहले उसका ईमान उसकी आत्मा को शुद्ध करता है। इसके परिणामस्वरूप उसका बाहरी रूप भी पवित्र हो जाता है। उसकी ईमानी प्रवृत्ति उसे एक सफ़ाई पसंद इंसान बना देती है।

मुसलमान अपनी नमाज़ के लिए रोज़ाना कम-से-कम पाँच बार हाथ, पैर और चेहरा धोकर वुज़ू करता है। वह रोज़ाना एक बार नहाकर अपने पूरे शरीर को साफ़ करता है। उसके कपड़े भले ही सादे हों, लेकिन वह हमेशा धुले हुए साफ़-सुथरे कपड़े पहनना पसंद करता है।

वह यह भी चाहता है कि उसका घर साफ़-सुथरा रहे। इसलिए वह रोज़ाना घर की सफ़ाई करता है, सामान को सही तरीक़े से रखता है और हर उस चीज़ से घर को साफ़ रखता है, जो बदबू या गंदगी फैला सकती है। उसके लिए यह ज़रूरी है कि उसके शरीर से लेकर उसके घर तक सब कुछ साफ़-सुथरा हो।

सफ़ाई की यह आदत सिर्फ़ उसके शरीर और घर तक सीमित नहीं रहती। यह आदत उसके घर के बाहर उसके पड़ोस तक फैल जाती है। वह चाहता है कि जहाँ वह रहता है, वहाँ का पूरा वातावरण साफ़-सुथरा हो। वह यह सुनिश्चित करता है कि वह या उसके परिवार के लोग आस-पास की जगह को गंदा न करें। यही शिक्षा वह दूसरों को भी देता है।

उसे तब तक संतोष नहीं मिलता, जब तक उसके पूरे पड़ोस में सफ़ाई-सुथराई का माहौल स्थापित न हो जाए।

साधारण लोगों के लिए सफ़ाई केवल सफ़ाई होती है, लेकिन मुसलमान के लिए सफ़ाई सामान्य रूप में सफ़ाई भी है और इसके साथ ही यह एक इबादत भी है, क्योंकि वह जानता है कि ईश्वर सिर्फ़ साफ़-सुथरे लोगों को पसंद करता है।

इसके अलावा, मुसलमान का ईमान यह सुनिश्चित करता है कि जब वह अपने शरीर को पवित्र करता है, तो उसकी आत्मा भी शुद्ध हो जाए। जब वह शारीरिक सफ़ाई करता है, तो साथ में यह प्रार्थना भी करता है कि "हे ईश्वर, मेरे बाहरी रूप के साथ-साथ मेरे भीतर को भी शुद्ध कर दे," और यह उसकी आत्मा की पवित्रता का माध्यम बन जाती है।

सहनशीलता

सहनशीलता एक उच्च इंसानी और इस्लामी गुण है। सहनशीलता का मतलब है—दूसरों की भावनाओं और ज़रूरतों का ख़्याल रखना। इसके विपरीत असहनशीलता यह है कि व्यक्ति केवल अपनी ही सोच को जाने और दूसरों की आवश्यकताओं को नज़रअंदाज़ कर दे। सहनशीलता एक उच्च इंसानी स्पिरिट है। इसे शरीयत में विभिन्न शब्दों में व्यक्त किया गया है, जैसे... रिफ़्क़, तालिफ़-ए-क़ल्ब, शफ़क़त अलल-ख़ल्क़, आदि।

जब इंसान के भीतर सच्ची ईश्वर-भक्ति और धार्मिकता आती है, तो वह स्वार्थ के कारण उत्पन्न होने वाली सभी बुराइयों से ऊपर उठ

जाता है। वह अपनी व्यक्तिगत इच्छाओं के बजाय वास्तविकताओं के लिए जीने लगता है। ऐसा व्यक्ति अपने स्वभाव के अनुसार दूसरों को प्रेम की दृष्टि से देखने लगता है। वह दूसरों से किसी चीज़ की उम्मीद नहीं करता, इसलिए अगर दूसरे उससे असहमति रखें या उसका अच्छा व्यवहार न करें, तब भी वह दूसरों का भला चाहता रहता है। तब भी वह दूसरों का ध्यान रखता है और उनके साथ अपने सहनशील व्यवहार को बनाए रखता है।

सहनशीलता यह है कि व्यक्ति हर स्थिति में दूसरे की इज़्ज़त करे, चाहे वह उसका समर्थक हो या विरोधी। वह हर परिस्थिति में दूसरे को ऊँचा इंसानी दर्जा दे, चाहे वह उसका अपना हो या पराया। वह दूसरे के मामले को हर हाल में सहानुभूति से देखे, भले ही दूसरे की ओर से प्रतिकूल रवय्या दिखाई दे।

सहनशीलता का मतलब वास्तव में दूसरों का ख़्याल रखना है। सामाजिक जीवन में आवश्यक रूप से एक व्यक्ति और दूसरे के बीच मतभेद होते हैं। धर्म, संस्कृति, रिवाज और व्यक्तिगत पसंद के अंतर हर समाज में होते हैं। ऐसी स्थिति में सबसे श्रेष्ठ तरीक़ा यह है कि व्यक्ति अपने सिद्धांतों पर अडिग रहते हुए भी दूसरों के प्रति सहनशीलता और खुलेपन का व्यवहार करे। वह अपनी निजी बातों में सिद्धांतों का पालन करे, लेकिन दूसरों के मामले में सहनशीलता अपनाए। वह ख़ुद को अपने मानकों (मापदंड, ideals) के अनुसार परखे, लेकिन दूसरों के मामले में सहनशीलता और बड़े दिल का रवैया अपनाए। यह सहनशीलता इंसानी गरिमा की आवश्यकता है और इस्लाम इंसान के भीतर यही उच्च गरिमा पैदा करता है।

एराज़: अवॉइडेंस

इस्लाम का एक महत्त्वपूर्ण सामाजिक सिद्धांत 'एराज़' (avoidance) है यानी शिकायत और मतभेद के अवसर पर टकराव से बचना। उत्तेजना के समय प्रतिक्रिया न करते हुए ख़ुद को सकारात्मक व्यवहार पर क़ायम रखना।

हर पुरुष और महिला का स्वभाव दूसरे पुरुष और महिला से अलग होता है। इसी तरह एक व्यक्ति और दूसरे व्यक्ति के बीच बहुत से अंतर होते हैं, जिनके कारण बार-बार एक को दूसरे से कड़वाहट का अनुभव होता है। एक व्यक्ति और दूसरे के बीच मतभेद की स्थितियाँ पैदा हो जाती हैं। सामाजिक जीवन में, चाहे वह घर के भीतर हो या बाहर, इस प्रकार की अप्रिय परिस्थितियाँ स्वाभाविक हैं। इसे रोकना किसी भी स्थिति में संभव नहीं है।

अब एक तरीक़ा यह है कि हर मतभेद से टकराव किया जाए। हर कड़वाहट का सीधा मुक़ाबला करके उसे दूर करने की कोशिश की जाए। इस प्रकार की कोशिश अप्राकृतिक है, क्योंकि यह समस्या को केवल बढ़ाएगी, घटाएगी नहीं। इस्लाम में ऐसे मौक़ों पर 'एराज़'(avoidance) की शिक्षा दी गई है यानी अप्रिय परिस्थितियों को समाप्त करने के बजाय उन्हें सहन करना, उत्तेजना का मुक़ाबला करने के बजाय उसे नज़रअंदाज करना, मतभेद के बावजूद लोगों के साथ एकजुट होकर रहना।

इस्लाम के अनुसार यह केवल एक सामाजिक तरीक़ा नहीं है, बल्कि एक महान पुण्य भी है। सामान्य स्थितियों में भी लोगों के साथ अच्छे से रहना पुण्य है, लेकिन जब कोई व्यक्ति शिकायत और मतभेद के बावजूद दूसरों के साथ अच्छे व्यवहार को बनाए रखता है, अपने

नकारात्मक भावनाओं को दबाकर सकारात्मक दृष्टिकोण को दिखाता है, तो उसका पुण्य बहुत बढ़ जाता है। ईश्वर के पास ऐसे लोगों को श्रेष्ठ लोगों में गिना जाएगा यानी वे लोग जिन्होंने दुनिया में उच्च नैतिकता और इंसानियत का उदाहरण दिया। एराज़ के बिना उच्च मानवीय चरित्र पर क़ायम रहना संभव नहीं है।

मतभेद के समय

मतभेद जीवन का एक हिस्सा है। अलग-अलग कारणों से लोगों के बीच मतभेद होते रहते हैं। जिस तरह सामान्य लोगों के बीच मतभेद होते हैं, उसी तरह सच्चे और ईमानदार लोगों के बीच भी मतभेद हो सकते हैं। मतभेद को होने से रोका नहीं जा सकता, लेकिन यह संभव है कि मतभेद के बावजूद व्यक्ति अपने आपको सही व्यवहार पर बनाए रखे।

मुसलमान वह होता है, जो मतभेद को नीयत का मसला नहीं बनाता। वह मतभेद को उसी दायरे में सीमित रखता है, जहाँ वह उत्पन्न हुआ है। एक मामले में मतभेद के कारण किसी को हर मामले में ग़लत समझ लेना या एक मतभेद के बाद उसे कपटी, बुरे इरादों वाला या बेईमान कहना, यह पूरी तरह से ग़ैर-इस्लामी तरीक़ा है।

मतभेद होने पर रिश्तों को तोड़ना सही नहीं है। मतभेद पर गंभीर चर्चा करते हुए भी आपसी रिश्तों को बनाए रखना चाहिए। मतभेद वाले व्यक्ति से बात करना या उसके साथ बैठना छोड़ देना किसी भी स्थिति में उचित नहीं है। इस दुनिया में हर चीज़ एक परीक्षा है। इसी तरह मतभेद भी एक परीक्षा है। व्यक्ति को चाहिए कि वह मतभेद के समय

बहुत सावधान रहे। वह लगातार प्रयास करे कि उससे कोई ऐसी ग़लत प्रतिक्रिया न हो, जो ईश्वर को पसंद न आए।

मतभेद के समय न्याय पर बने रहना निश्चित रूप से एक कठिन काम है, लेकिन इसका इनाम भी बहुत बड़ा है। इस्लाम में हर सही काम एक इबादत है। यह भी एक महान इबादत है कि मतभेद और झगड़े की स्थिति में भी व्यक्ति अपने दिल को दुश्मनी और बदले की भावना से बचाए और मतभेद के बावजूद न्याय की राह पर बना रहे।

मतभेद का होना बुरा नहीं है, बुरा यह है कि मतभेद के बाद व्यक्ति परीक्षा में सफल न हो। मतभेद के समय संयम बनाए रखना एक महान इस्लामी कार्य है और मतभेद के समय संयम खो देना एक गंभीर ग़ैर-इस्लामी कार्य है।

पड़ोसी

पड़ोसी किसी व्यक्ति का सबसे निकटतम साथी होता है। घर के सदस्यों के बाद व्यक्ति का सामना सबसे पहले जिन लोगों से होता है, वे उसके पड़ोसी होते हैं। पड़ोसी को ख़ुश रखना और उसके साथ अच्छा संबंध बनाए रखना, ईश्वर-भक्त के जीवन का एक महत्त्वपूर्ण पहलू है।

पड़ोसी चाहे अपने धर्म का हो या किसी अन्य धर्म का, चाहे अपनी जाति का हो या किसी अन्य जाति का, वह हर स्थिति में सम्मान का पात्र है। हर हाल में उसका वह अधिकार दिया जाएगा, जो शरीयत और इंसानियत का तकाज़ा है।

हदीस में कहा गया है कि हज़रत मोहम्मद ने कहा, "ईश्वर की क़सम, वह मुसलमान नहीं है। ईश्वर की क़सम, वह मुसलमान नहीं है।

ईश्वर की क़सम, वह मुसलमान नहीं है, जिसका पड़ोसी उसकी बुराइयों से सुरक्षित न हो।" इस हदीस के अनुसार, यदि कोई मुसलमान अपने पड़ोसी को परेशान करता है, ऐसा व्यवहार करता है जिससे उसके पड़ोसी को तकलीफ़ हो और वह पड़ोसी के लिए कष्ट का कारण बनता है, तो ऐसे मुसलमान का ईमान और इस्लाम संदिग्ध हो जाता है।

किसी व्यक्ति की इंसानियत और धार्मिक भावना की पहली कसौटी उसका पड़ोसी होता है। पड़ोसी इस बात का मापदंड है कि व्यक्ति में मानवीय संवेदना है या नहीं और वह इस्लामी आदेशों के प्रति संवेदनशील है या नहीं। यदि किसी व्यक्ति का पड़ोसी उससे ख़ुश है, तो यह माना जा सकता है कि वह व्यक्ति सही है और यदि उसका पड़ोसी उससे नाख़ुश है, तो यह इस बात का प्रमाण होगा कि वह व्यक्ति सही नहीं है।

पड़ोसी के संबंध में शरीयत के जो आदेश हैं, उनसे यह पता चलता है कि मुसलमान को चाहिए कि वह एकतरफ़ा रूप से अपने पड़ोसी का ख़्याल रखे। वह पड़ोसी के व्यवहार को अनदेखा करते हुए भी उसके साथ अच्छे बर्ताव की कोशिश करे। अच्छा पड़ोसी बनना व्यक्ति के अच्छे इंसान होने का प्रमाण है। ऐसे इंसान को ही ईश्वर अपनी कृपा में शामिल करेगा।

हुक़ूक़-उल-इबाद— बंदों के अधिकार

मुसलमान पर एक ज़िम्मेदारी वह है, जो ईश्वर की तरफ़ से उस पर रखी गई है। इसे 'हक़ुल्लाह—ईश्वर के अधिकार' कहा जाता है यानी ईश्वर को उसकी सभी श्रेष्ठ विशेषताओं के साथ मानना, उसकी इबादत करना और अपने आपको उसके आगे जवाबदेह समझना। यह

सुनिश्चित करना कि जब भी ईश्वर का कोई आदेश आएगा, वह तुरंत उसे मान लेगा और दिल से उसका पालन करेगा।

मुसलमान की दूसरी ज़िम्मेदारी वह है जिसे हुक़ूक़-उल-इबाद कहा जाता है यानी बंदों के अधिकार। यह वह ज़िम्मेदारी है, जो उस पर दूसरे इंसानों के संदर्भ में आती है। हर पुरुष या महिला, चाहे वह उसका रिश्तेदार हो, उसका पड़ोसी हो, उसका हमवतन हो या उसका व्यापारिक साथी हो, हर किसी का उस पर कुछ हक़ है। इन अधिकारों को पूरा करना मुसलमान की अनिवार्य ज़िम्मेदारी है। इन अधिकारों को अदा किए बिना वह ईश्वर की मदद का हक़दार नहीं बन सकता।

हुक़ूक़-उल-इबाद का मतलब क्या है? इसका मतलब है कि जब भी और जहाँ भी एक मुसलमान का सामना दूसरे इंसानों से हो, वह उनके साथ वही व्यवहार करे, जो इस्लामिक सिद्धांतों के अनुसार हो। वह उनके साथ ऐसा व्यवहार न करे, जो इस्लामी मानकों पर खरा न उतरे।

उदाहरण के लिए, दूसरे का सम्मान करना और उसे कभी अपमानित न करना। दूसरे को लाभ पहुँचाना और अगर लाभ पहुँचाना संभव न हो तो कम-से-कम अपने नुक़सान से उसे बचाना। दूसरों से किए गए वादों को पूरा करना और कभी उनकी अवहेलना न करना। दूसरों की संपत्ति पर अन्यायपूर्वक कब्ज़ा करने की कोशिश न करना। हर स्थिति में न्याय करना और कभी अन्याय न करना। हर व्यक्ति के प्रति सद्भावना रखना और बिना किसी कारण के उसके प्रति बुरा विचार न रखना। हर किसी को उसके भले के अनुसार सलाह देना और कभी किसी को बुरी सलाह न देना, आदि।

हर व्यक्ति को दूसरे के प्रति अपनी इंसानी ज़िम्मेदारियों को निभाना चाहिए। यही हुक़ूक़-उल-इबाद है।

इंसान की धारणा

इंसान ईश्वर का बंदा है। ईश्वर ने इंसान को एक विशेष योजना के तहत पैदा किया है। वह यह कि उसे दुनिया में एक निश्चित समय तक रखकर उसकी परीक्षा ली जाए। फिर जो लोग इस परीक्षा में खरे उतरें, उन्हें स्वीकृति और इनाम दिया जाए और जो लोग इसमें असफल हों, उन्हें अस्वीकार कर दिया जाए।

इस परीक्षा की वजह से दुनिया में इंसान को स्वतंत्रता दी गई है। यहाँ उसे जो कुछ भी मिलता है, वह उसका अधिकार नहीं है, बल्कि उसकी परीक्षा का एक माध्यम है। हर स्थिति एक परीक्षा है और हर स्थिति में इंसान को उसके अनुसार अपना आवश्यक कार्य करना चाहिए।

इंसान के लिए सही तरीक़ा यह नहीं है कि उसकी इच्छाएँ और उसकी बुद्धि उसे जिस दिशा में ले जाए, वह उसी दिशा में चला जाए, बल्कि सही तरीक़ा यह है कि वह अपनी ईश्वर-निर्मित सृष्टि निर्माण योजना को समझे और उस पर विश्वास करते हुए उसके अनुसार अपनी ज़िंदगी का निर्माण करे।

इंसान अपनी वर्तमान स्वतंत्रता का दुरुपयोग करके ईश्वर की योजना से भटक सकता है, लेकिन वह अपने आपको उस ग़लत रास्ते के परिणाम से नहीं बचा सकता। इसलिए हर व्यक्ति के लिए यही उसके अपने भले की बात है कि वह अपनी ज़िंदगी की दिशा तय करने में अत्यधिक सतर्क रहे। अपनी इच्छा को मार्गदर्शक बनाने के बजाय वह ईश्वर की इच्छा को अपना मार्गदर्शक बनाए। अपनी इच्छाओं का पीछा करने के बजाय वह ईश्वर के आदेशों का पालन करते हुए अपना जीवन बिताए।

इंसान ईश्वर की सृष्टि की उत्कृष्ट रचना है, लेकिन इसके साथ ही वह ईश्वर की सृजनात्मक योजना के अधीन है। इन्हीं दोनों पहलुओं को ध्यान में रखते हुए इंसान की प्रगति का रहस्य छिपा हुआ है। इंसान ने आधुनिक औद्योगिक सभ्यता बनाने में इस तरह सफलता पाई है कि उसने प्रकृति के नियमों को खोजकर उन्हें अपनाया। इसी तरह, परलोक की व्यापक सफलता इंसान को तभी प्राप्त होगी, जब वह इंसानियत के बारे में ईश्वर की सृजनात्मक योजना को समझे और उसे सही तरीक़े से अपनाकर अपने जीवन का निर्माण करे।

जनसेवा

मुसलमान के अंदर जो उच्च भावनाएँ होनी चाहिएँ, उनमें से एक है जनसेवा यानी दूसरे प्राणियों के काम आना। लोगों की ज़रूरतें पूरी करना। बिना किसी इनाम की उम्मीद किए हर किसी की आवश्यकताएँ पूरी करना।

दूसरों की मदद करना वास्तव में ईश्वर द्वारा ख़ुद को मिली नेमतों (blessings) का आभार व्यक्त करना है। वही व्यक्ति दूसरों के काम आता है, जिसके पास दूसरों की तुलना में कुछ विशेष योग्यताएँ होती हैं, जैसे कि आँखों वाले व्यक्ति का एक अंधे व्यक्ति की मदद करना, एक स्वस्थ व्यक्ति का किसी अपाहिज की मदद करना, एक धनवान व्यक्ति का निर्धन व्यक्ति की सहायता करना या एक प्रतिष्ठित व्यक्ति का किसी तुच्छ व्यक्ति की मदद करना।

जब भी कोई व्यक्ति ईश्वर की दी हुई किसी विशेषता के आधार पर किसी की मदद करता है, तो वह ऐसा करके ईश्वर के उपकार का

स्वीकार करता है। वह मौन भाषा में कहता है, "हे ईश्वर, जो कुछ मेरे पास है, वह तेरा ही दिया हुआ है। अब मैं इसे फिर से तेरी ही राह में ख़र्च कर रहा हूँ। तू हम दोनों के लिए अपनी और भी ज़्यादा रहमत और बरकत लिख दे।"

जनसेवा का कार्य करके व्यक्ति केवल दूसरों की मदद नहीं करता, बल्कि अपनी स्थिति को भी बेहतर बनाता है। मिली हुई चीज़ को केवल अपने लिए इस्तेमाल करना पशु स्तर (animal level) पर जीने के समान है, क्योंकि पशु भी वही करता है; जो कुछ उसके पास होता है, वह केवल उसका ही होता है, उसमें किसी और पशु का हिस्सा नहीं होता।

लेकिन इंसान का स्तर इससे ऊँचा है। इंसान सभी प्राणियों में सबसे श्रेष्ठ है। उसकी उच्च अवस्था के अनुसार सही व्यवहार यह है कि वह केवल अपनी इच्छाओं में सिमटकर न जिए, बल्कि पूरी इंसानियत को अपने दिल में समेटे। वह दुनिया में इस तरह से जिए कि वह दूसरों का भला चाहता हो, उनकी सेवा के लिए हमेशा तैयार रहता हो। वह अपने संसाधनों में दूसरों का अधिकार भी माने।

जनसेवा को दूसरे शब्दों में इंसानियत की सेवा कहा जा सकता है और ईश्वर की आराधना के बाद इंसानियत की सेवा से बड़ा कोई काम नहीं है।

समानता

इस्लाम के अनुसार सभी इंसान बराबर हैं। पैग़म्बर-ए-इस्लाम हज़रत मोहम्मद ने अपने हज के मौके पर घोषणा की थी कि किसी अरबी को किसी अजमी (ग़ैर-अरबी) पर श्रेष्ठता नहीं है। किसी गोरे

को किसी काले पर श्रेष्ठता नहीं है। श्रेष्ठता का आधार केवल 'तक़वा' (परहेज़गारी) है, न कि रंग या नस्ल।

लोगों में रंग और नस्ल आदि के आधार पर भले ही बहुत से भेद दिखाई देते हैं, लेकिन ये भेद पहचान के लिए हैं, श्रेष्ठता के लिए नहीं। सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन की व्यवस्था बनाए रखने के लिए यह आवश्यक है कि लोगों में ऐसी विशेषताएँ हों जिससे वे एक-दूसरे से अलग पहचाने जा सकें। इसी सामाजिक आवश्यकता के कारण ईश्वर ने इंसानों में अलग-अलग बाहरी भेद बनाए हैं, ताकि दुनिया की व्यवस्था और आपसी लेन-देन सरलता से चल सके।

लेकिन ये सारे बाहरी भेद केवल दुनियावी पहचान के लिए हैं। जहाँ तक इंसान की वास्तविक श्रेष्ठता का सवाल है, वह पूरी तरह से आंतरिक गुणों पर आधारित है। यही कारण है कि हदीस में कहा गया है कि ईश्वर लोगों के दिलों को देखता है, उनके जिस्मों को नहीं यानी शारीरिक भेद का संबंध केवल इंसानी मामलों से है। ईश्वर के यहाँ केवल उन्हीं लोगों को ऊँचा दर्जा मिलेगा, जो अपनी आंतरिक गुणों के कारण सम्मान के योग्य साबित होंगे।

इस्लामी व्यवस्था के हर क्षेत्र में इस इंसानी समानता को ध्यान में रखा गया है। नमाज़ में सभी इंसान एक साथ पंक्ति में खड़े होते हैं। हज में दुनिया-भर के मुसलमान एक जैसे कपड़े पहनकर हज के रीति-रिवाज निभाते हैं। इसी तरह इस्लाम की सामाजिक व्यवस्था में हर व्यक्ति को वही दर्जा प्राप्त है, जो किसी अन्य व्यक्ति को है, न किसी के लिए कम और न किसी के लिए ज़्यादा।

इस्लाम के अनुसार हर प्रकार की बड़ाई केवल एक ईश्वर के लिए है। इंसान, चाहे उनके बाहरी भेद कुछ भी हों, सब समान रूप से ईश्वर के बंदे हैं। इंसान और ईश्वर के बीच तो निश्चित ही अंतर है, लेकिन इंसान और इंसान के बीच किसी भी प्रकार का कोई भेद नहीं है।

इंसानी एकता

इस्लाम के अनुसार, सभी इंसान एक ही ईश्वर की बनाई हुई रचना हैं। इसलिए, सभी इंसान एक समुदाय हैं और आपस में भाई-भाई हैं। इंसान और इंसान के बीच भेदभाव करना ईश्वर को पसंद नहीं है।

इंसानियत की शुरुआत एक जोड़े से हुई, जिसे आदम और हव्वा कहा जाता है। चाहे इंसान कहीं भी हों या किसी भी देश में रहते हों, वे सभी इसी एक माँ-बाप की संताने हैं। रंग, भाषा और दूसरी भिन्नताएँ केवल भौगोलिक कारणों से हुई हैं, लेकिन जहाँ तक उनकी असलियत की बात है, सभी इंसान अंततः आदम और हव्वा की संतान हैं और उन्हीं से पूरी दुनिया में फैले हैं।

इस्लाम की शिक्षा यह है कि रंग, भाषा और दूसरी चीज़ों के अंतर के कारण लोग एक-दूसरे को अजनबी न समझें। इसके विपरीत, हर इंसान के दिल में दूसरे के लिए अपनापन होना चाहिए। सभी को एक-दूसरे से प्यार करना चाहिए। हर कोई एक-दूसरे की मदद करे। सारे इंसान व्यापक अर्थों में मिल-जुलकर वैसे ही रहें, जैसे लोग अपने सीमित परिवार में रहते हैं।

सच तो यह है कि एक इंसान और दूसरे इंसान के बीच का संबंध अंजानेपन का नहीं, बल्कि अपनेपन का है। यह दूरियों का नहीं, बल्कि नज़दीकी का है। यह नफ़रत का नहीं, बल्कि प्यार का है।

जब सभी इंसान एक ही माँ-बाप की संतान हैं, तो इसका मतलब यह भी है कि सभी इंसान बराबर हैं। यहाँ कोई छोटा या बड़ा इंसान नहीं है। छोटा-बड़े का फ़र्क़ इंसान और इंसान के बीच नहीं है, बल्कि इंसान और ईश्वर के बीच है। जहाँ तक इंसान का सवाल है, सभी इंसान एक-दूसरे के समान हैं, लेकिन कोई भी इंसान ईश्वर के समान नहीं।

सभी इंसान समान रूप से ईश्वर के बंदे और उसकी रचना हैं। ईश्वर सभी को एक नज़र से देखता है। वह अपनी रचना में किसी के साथ भेदभाव नहीं करता।

सकारात्मक सोच

पैग़म्बर मुहम्मद के समय में बहुत-से लोग इस्लाम के विरोधी हो गए और इस्लाम और मुसलमानों के ख़िलाफ़ षड्यंत्र रचने लगे। क़ुरआन में कई जगह इस घटना का उल्लेख है, लेकिन क़ुरआन में इसके मुक़ाबले में जो उपाय बताया गया, वह यह नहीं था कि तुम उनकी साज़िशों को बेनक़ाब करो। उनके ख़िलाफ़ कोई आंदोलन चलाओ। उनकी साज़िश और दुश्मनी को ख़त्म करने के लिए उनसे लड़ाई करो। इसके विपरीत, क़ुरआन में पैग़म्बर और उनके साथियों को केवल एक निर्देश दिया गया और वह था ईश्वर पर भरोसा करो यानी षड्यंत्रों और दुश्मनियों को नज़रअंदाज़ करते हुए केवल ईश्वर पर भरोसा रखो। इस प्रकार की बातों से बेपरवाह होकर अपनी सकारात्मक गतिविधियों को जारी रखो।

यह एक बेहद महत्त्वपूर्ण निर्देश था। इसके माध्यम से ईश्वर ने मुसलमानों के मन को नकारात्मक सोच से हटाकर सकारात्मक सोच की ओर मोड़ दिया। एक शब्द में, इस क़ुरआनी शिक्षा का मतलब यह था कि: दूसरों में जीने के बजाय अपने आप में जियो।

अगर आपके मन में यह विचार भर जाए कि दूसरे लोग आपके ख़िलाफ़ साज़िश कर रहे हैं, सभी लोग आपके दुश्मन हो गए हैं, तो इसका परिणाम यह होगा कि आप हर किसी पर संदेह करने लगेंगे। यहाँ तक कि जब आपके अपने समूह का कोई व्यक्ति सब्र की बात करेगा, तो आप इसे उल्टे अर्थ में लेकर यह सोचेंगे कि वह दुश्मनों का एजेंट है।

इस तरह आप ख़ुद अपने लोगों को अपने से दूर करके अपने आपको कमज़ोर कर लेंगे।

दूसरों को षड्यंत्रकारी या दुश्मन समझने का एक नुकसान यह है कि ऐसे लोग निष्पक्ष सोच (objective thinking) को खो देते हैं। उनकी सारी सोच पक्षपाती और ग़लतफ़हमी से ग्रसित हो जाती है। वे हक़ीक़त को वैसे नहीं देख पाते, जैसे वे हैं। उनकी स्थिति उस व्यक्ति जैसी हो जाती है, जो अपनी आँखों की किसी ख़राबी के कारण बाग़ में केवल काँटे ही देखता है। ऐसा व्यक्ति फूलों को देखने में असमर्थ हो जाता है। उसे पूरा बाग़ केवल काँटों से भरा हुआ लगता है, जबकि उसी समय बाग़ में हज़ारों सुंदर फूल खिले होते हैं, जिन्हें वह देखने से वंचित रह जाता है।

शांति प्रियता

मुसलमान एक शांति प्रिय व्यक्ति होता है। ईमान और शांति प्रियता इतनी गहराई से जुड़े हुए हैं कि मुसलमान हर परिस्थिति में शांति बनाए रखने की कोशिश करता है। वह हर दूसरी चीज़ खोना बर्दाश्त कर लेता है, लेकिन शांति खोना उसे स्वीकार नहीं।

मुसलमान जिस जीवन को इस दुनिया में जीना चाहता है, वह केवल शांतिपूर्ण परिस्थितियों में ही संभव है। शांति की स्थिति मुसलमान के लिए अनुकूल वातावरण प्रदान करती है, जबकि अशांति की स्थिति उसके लिए प्रतिकूल वातावरण बनाती है।

शांति हमेशा एक बलिदान चाहती है। यह बलिदान यह है कि यदि दूसरी ओर से अशांति के कारण उत्पन्न हों, तो भी उन्हें अनदेखा

करते हुए शांति की स्थिति को बनाए रखा जाए। मुसलमान हमेशा इस बलिदान को देने के लिए तैयार रहता है। वह हर नुकसान और अन्याय को सहन करता है, ताकि शांति भंग न हो और शांति का माहौल लगातार बना रहे।

मुसलमान भीतर से बाहर तक एक रचनात्मक (creative) व्यक्ति होता है। उसकी रचनात्मक गतिविधियाँ केवल शांतिपूर्ण माहौल में ही चल सकती हैं। इसलिए वह हर क़ीमत चुका कर शांति को बनाए रखता है, ताकि उसकी रचनात्मकता बिना किसी रुकावट के जारी रहे।

मुसलमान प्रकृति के बग़ीचे का एक फूल है। फूल गर्म हवा में मुरझा जाता है और ठंडी हवा में अपनी सुंदरता बनाए रखता है। यही स्थिति मुसलमान की है। शांति मुसलमान की आवश्यक ज़रूरत है। शांति उसकी जीवनरेखा है। मुसलमान अत्यंत लालसा के साथ शांति चाहता है, ताकि उसके इंसानी वृक्ष पर ईमान का फूल खिले और बिना किसी बाधा के प्रकृति की हवा में अपनी सुंदरता बिखेर सके।

शांति ब्रह्मांड का नियम है। शांति प्रकृति का सार्वभौमिक कानून है। ईश्वर को शांति पसंद है, अशांति उसे पसंद नहीं। यही तथ्य इस बात के लिए पर्याप्त है कि मुसलमान शांति को पसंद करे। वह किसी भी स्थिति में अशांति बर्दाश्त नहीं कर सकता।

ईश्वरमय जीवन

इस्लाम का उद्देश्य यह है कि इंसान को ऐसा बनाया जाए कि वह दुनिया में ईश्वरमय जीवन जीने लगे। वह गैर-ईश्वरमय जीवन को पूरी तरह से त्याग दे। गैर-ईश्वरमय जीवन वह है, जिसमें व्यक्ति की दिलचस्पियाँ

ईश्वर के अलावा अन्य चीज़ों में लगी रहती हैं। उसका ध्यान सृष्टिकर्ता पर हो, सृष्टि पर नहीं। वह दोस्ती करे तो ईश्वर के लिए करे और प्रतिरोध भी ईश्वर के लिए करे। उसकी सोच और भावनाओं का केंद्र पूरी तरह से ईश्वर बन जाए। जब कोई व्यक्ति किसी लक्ष्य तक पहुँचने के लिए एक रास्ता चुनता है, तो वह यह समझता है कि बिना दाएँ-बाएँ मुड़े उसी रास्ते पर चलते रहना ज़रूरी है, क्योंकि इसके बिना वह अपने लक्ष्य तक नहीं पहुँच सकता। यही स्थिति इंसान और ईश्वर के संबंध में भी है।

इस दुनिया में जब कोई व्यक्ति अपनी जीवन यात्रा शुरू करता है, तो एक रास्ता वह होता है, जो ईश्वर की ओर जाता है। इसके साथ ही कई अन्य रास्ते भी होते हैं, जो इधर-उधर मुड़कर किसी अन्य लक्ष्य की ओर जाते हैं। ईश्वर के सच्चे साधक का तरीक़ा यह है कि वह पूरी निष्ठा से ईश्वर के रास्ते पर चलता रहे। वह कभी भी दाएँ-बाएँ जाने वाले रास्तों की ओर न मुड़े। जो व्यक्ति ईश्वर की ओर जाने वाले सीधे रास्ते पर बना रहता है, वह निश्चित रूप से ईश्वर तक पहुँच जाएगा। इसके विपरीत, जो व्यक्ति इधर-उधर भटक जाए, वह बीच में ही भटककर रह जाएगा और कभी भी ईश्वर तक नहीं पहुँच सकेगा।

इधर-उधर भटकने का मतलब है कि व्यक्ति अपनी इच्छाओं का ग़ुलाम बन जाए। वह बाहरी लाभ को अधिक महत्त्व देने लगे। वह ग़ुस्सा, नफ़रत, ईर्ष्या और अहंकार जैसी भावनाओं में फँस जाए। बिना सोचे-समझे हर उस दिशा में दौड़ पड़े, जो उसे खुली हुई दिखती हो।

इसके विपरीत, ईश्वर का रास्ता यह है कि व्यक्ति ईश्वर के आदेशों पर विचार करे। वह गंभीरता से सोच-समझकर सही दिशा चुने। वह परलोक की जवाबदेही की बुनियाद पर अपनी ज़िंदगी की दिशा तय करे, न कि केवल वक़्ती फ़ायदे या वक़्ती प्रेरणाओं के आधार पर।

सुबह और शाम

इस्लाम जीवन का एक संपूर्ण कार्यक्रम है। यह व्यक्ति के पूरे जीवन को समेटे हुए है। सुबह से शाम तक और शाम से सुबह तक जीवन का कोई भी क्षण ऐसा नहीं है, जो इस्लाम के दायरे से बाहर हो। एक मुसलमान रात में सोकर सुबह जल्दी उठता है। वह सबसे पहले अपने शरीर को पवित्र करता है और वुज़ू करके फ़ज्र की नमाज़ अदा करता है। यह मानो मुसलमान की जीवन यात्रा का आरंभ है, जो पवित्रता और इबादत से शुरू होती है। इसके बाद सुबह से दोपहर तक का समय आजीविका के लिए मेहनत करने का समय होता है। हालाँकि, इस दौड़-धूप के दौरान मुसलमान लगातार ईश्वर को याद करता रहता है। वह हर मामले में ईश्वर द्वारा तय की गई सीमाओं का पालन करता है। लेन-देन में वह ईमानदारी का तरीक़ा अपनाता है। लोगों से मिलने-जुलने में वह पूरी तरह से इस्लामी नैतिकता को अपनाए रखता है।

फिर दूसरी नमाज़ का समय आ जाता है, जो दोपहर के बाद पढ़ी जाती है। यह ज़ुहर की नमाज़ है। ज़ुहर की नमाज़ के माध्यम से वह ईश्वर से अपने संबंध को फिर से जीवित करता है। अपने शरीर और आत्मा को पवित्र कर, वह जीवन की संघर्ष यात्रा में दोबारा शामिल हो जाता है। वह एक उसूलों वाले व्यक्ति की तरह अपने कार्यों में व्यस्त हो जाता है। इसी प्रकार तीसरी नमाज़ का समय आ जाता है, जिसे अस्र की नमाज़ कहा जाता है। अब वह फिर से नमाज़ की ओर रुख़ करता है। वह फिर ईश्वर की रहमतों में से अपना हिस्सा लेता है, ताकि अगले चरण में उसे सहायता मिल सके।

इस प्रकार मुसलमान का समय बीतता रहता है, जब तक कि सूरज डूब नहीं जाता और चौथी नमाज़ का समय आ जाता है, जिसे

मग़रिब की नमाज़ कहा जाता है। अब मुसलमान अपने काम को छोड़कर फिर से नमाज़ की ओर ध्यान देता है। वह निर्धारित तरीक़े से नमाज़ अदा करता है और उससे धार्मिक और आध्यात्मिक पोषण लेकर बाहर आता है। इसके बाद वह नमाज़ से प्राप्त हुए धार्मिक विचार के तहत अपनी ज़रूरतें पूरी करता रहता है। फिर पाँचवीं नमाज़ का समय आ जाता है, जिसे इशा की नमाज़ कहा जाता है। इशा की नमाज़ के बाद मुसलमान अपने बिस्तर पर जाता है और पूरे दिन के कार्यों का मूल्यांकन करते हुए सो जाता है, ताकि सुबह उठकर वह अगले दिन को और बेहतर तरीक़े से शुरू कर सके।

प्रेरणा ग्रहण करना

मुसलमान का स्वभाव प्रेरणा ग्रहण करने वाला होता है। इसे क़ुरआन में 'तवस्सुम' कहा गया है यानी घटनाओं से शिक्षा लेना और आस-पास की चीज़ों से सबक़ हासिल करना।

ईमान अपने स्वभाव के परिणामस्वरूप व्यक्ति को संवेदनशील बना देता है। वह हर मामले की गहराई तक पहुँचने की कोशिश करता है। उसका स्वभाव ऐसा बन जाता है कि वह चीज़ों की सतह से आगे बढ़कर उनकी गहराइयों में उतरता है। जिन चीज़ों को देखकर लोग सामान्य रूप से गुज़र जाते हैं, उनमें वह ज्ञान और समझ का ख़ज़ाना खोज लेता है। वह दृष्टि से आगे बढ़कर अंतर्दृष्टि की नेमतें पा लेता है।

यह एक महान विशेषता है, जो व्यक्ति की शख़्सियत को असीम बना देती है। वह हर समय नई-नई चीज़ें खोजता है। विस्तृत ब्रह्मांड उसकी आत्मा के लिए पोषण का एक महान भंडार बन जाता है।

सूरज की रोशनी में उसे ईश्वर की पहचान का प्रकाश दिखाई देता है। हवा के झोंकों में वह ईश्वर के स्पर्श का अनुभव करता है। हरे-भरे पेड़ और रंग-बिरंगे फूल उसे आध्यात्मिक दुनिया की झलकियाँ दिखाने लगते हैं। वह हर बसंत में एक और विस्तृत बसंत और हर पतझड़ में एक और अर्थपूर्ण पतझड़ का दृश्य देखता है। इसी तरह सभी इंसानी और गैर-इंसानी घटनाएँ उसके लिए शिक्षा का ख़ज़ाना बन जाती हैं। वह दूसरों के ज्ञान से अपने ज्ञान में वृद्धि करता है।

दूसरों की ग़लतियाँ उसके लिए अपने सुधार का कारण बन जाती हैं। चींटी से लेकर ऊँट तक और नदी से लेकर पहाड़ तक, हर चीज़ में वह ऐसे पहलू खोज लेता है, जो उसकी गहरी समझ को बढ़ाएँ और उसे नए अनुभवों से परिचित कराएँ और उसे नई ऊँचाइयों तक पहुँचाएँ। जैसे भौतिक भोजन शरीर के स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है, वैसे ही सीख और नसीहत आत्मा के लिए भोजन हैं। भौतिक भोजन अगर शारीरिक स्वास्थ्य की गारंटी है, तो नसीहत लेना आत्मिक स्वास्थ्य की गारंटी है।

घरेलू जीवन

पैग़म्बर-ए-इस्लाम हज़रत मोहम्मद ने फ़रमाया कि तुम में सबसे अच्छा इंसान वह है, जो अपने घरवालों के लिए सबसे अच्छा हो। यह बात घर के हर सदस्य के लिए लागू होती है, चाहे वह महिला हो या पुरुष, छोटा हो या बड़ा। हर किसी को अपने घर में एक अच्छा पुरुष या एक अच्छी महिला बनकर रहना है। हर किसी को अपने परिवार का अच्छा सदस्य बनना है।

घर क्या है? घर सामाजिक जीवन की सबसे बुनियादी इकाई है। कई घरों के मिलकर बनने से समाज बनता है। अगर घर का माहौल अच्छा हो तो समाज का माहौल भी अच्छा होगा और अगर घर का माहौल बिगड़ जाए तो समाज का माहौल भी निश्चित रूप से बिगड़ जाएगा। अच्छे घरों का समूह अच्छा समाज बनाता है, जबकि बुरे घरों का समूह बुरा समाज बनाता है।

किसी व्यक्ति के अच्छे होने का पैमाना सबसे पहले उसका घर होता है। अगर कोई व्यक्ति समाज में दूसरों के साथ मिलनसार रहे, लेकिन घर में सख़्ती से पेश आए, तो उसे अच्छा इंसान नहीं कहा जाएगा, क्योंकि एक अच्छे इंसान का असली पैमाना उसकी घर की ज़िंदगी है, न कि बाहर की।

घर के जीवन में हर किसी को कैसे रहना चाहिए? यह ऐसा होना चाहिए कि बड़ा व्यक्ति छोटे का ख़्याल रखे और छोटा व्यक्ति बड़े का सम्मान करे। पुरुष घर की महिलाओं के साथ नरमी से पेश आएँ और महिलाएँ पुरुषों के लिए कोई समस्या न खड़ी करें। घर के सभी सदस्यों का ध्यान अपनी ज़िम्मेदारियों पर हो, न कि अपने अधिकारों पर। हर कोई यह चाहे कि वह अपने हिस्से का काम करने के साथ-साथ दूसरों के काम में भी मदद करे। जब भी घर में कोई समस्या हो, तो हर कोई यह प्रयास करे कि समस्या और न बढ़े, बल्कि जल्दी से सुलझ जाए।

सफल घरेलू जीवन का रहस्य सेवा और मेल-जोल में है। घर का हर सदस्य दूसरे की सेवा करने की भावना अपने अंदर रखे और मतभेद या शिकायत के बावजूद मेल-जोल के साथ रहने के लिए तैयार रहे।

आत्म-सम्मान

आत्म-सम्मान और अहंकार में इतना कम अंतर है कि यह तय करना लगभग असंभव है कि आत्म-सम्मान कहाँ ख़त्म होता है और अहंकार कहाँ से शुरू होता है। यही कारण है कि इस्लाम में आत्म-सम्मान को कोई विशेष दर्जा नहीं दिया गया है।

अधिकतर परिस्थितियों में आत्म-सम्मान वास्तव में अहंकार का ही दूसरा नाम होता है। गहराई से देखा जाए तो पता चलता है कि आत्म-सम्मान कोई सराहनीय चीज़ नहीं है। आत्म-सम्मान की सच्चाई यह है कि अधिकतर स्थितियों में यह केवल अहंकार का ही एक सुंदर नाम होता है।

इस्लाम में असली महत्त्वपूर्ण चीज़ आत्म-सम्मान नहीं, बल्कि विनम्रता है। इस्लाम में उच्च नैतिकता का मानक नम्रता है। तर्क के आगे झुक जाना, अपनी गलती को स्वीकार कर लेना और पूरी तरह से अकड़ से मुक्त होना—यह एक मुसलमान की विशेषताएँ हैं और इन गुणों के साथ आत्म-सम्मान का कोई मेल नहीं है। सच तो यह है कि आत्म-सम्मान का स्वभाव व्यक्ति के लिए नम्रता, स्वीकार्यता और ज्ञान में बाधा बन जाता है, जबकि इस्लाम की उच्च नैतिकताएँ यही हैं।

जब दो लोगों या दो समूहों में विवाद होता है तो यह जल्दी ही प्रतिष्ठा का सवाल बन जाता है और जब कोई मामला प्रतिष्ठा की बात बन जाए तो अपनी जगह से हटना व्यक्ति को अपना अपमान महसूस होता है। इसलिए अपनी प्रतिष्ठा को बचाने के नाम पर वह अपनी जगह पर अड़ जाता है। यही ज़िद या अड़ने का सुंदर नाम आत्म-सम्मान है।

सही इस्लामी तरीक़ा यह है कि विवाद को किसी भी स्थिति में प्रतिष्ठा का सवाल न बनाया जाए, बल्कि सुलह की भावना से इसे

सुलझाने का प्रयास किया जाए। इस तरह के मामलों में झुकना ही इस्लाम का आदेश है, न कि ज़िद में पड़कर अड़ जाना और यह कहकर अपने आपको धोखा देना कि मैं अपने आत्म-सम्मान को बचाने के लिए ऐसा कर रहा हूँ।

ज़िद एक मानसिक बुराई है, जबकि सादगी और विनम्रता एक महान इबादत है। ईश्वर ज़िद और अकड़ को नापसंद करता है। इसके विपरीत वह सादगी और विनम्रता को पसंद करता है और जो लोग सच्चे अर्थों में सादगी और विनम्रता दिखाते हैं, उका दर्जा दुनिया और परलोक में ऊँचा करता है।

सादगी

मुसलमान वह होता है, जो ईश्वर को पा लेता है। ईश्वर को पाने वाला व्यक्ति स्वाभाविक रूप से ऊँची सच्चाइयों में जीने लगता है। वह बाहरी चीज़ों से ऊपर उठकर अपनी रुचि की सामान आध्यात्मिक दुनिया में पा लेता है।

ऐसा व्यक्ति अपने स्वभाव के अनुसार सादगी पसंद बन जाता है। उसका दृष्टिकोण यह हो जाता है—

Simple living, high thinking

सादा जीवन, ऊँची सोच

जो व्यक्ति आध्यात्मिक सच्चाइयों का स्वाद पा लेता है, उसके लिए बाहरी और भौतिक चीज़ों में कोई आनंद नहीं बचता। ऐसे व्यक्ति को सादगी में ही आनंद मिलने लगता है। बनावटी ताम-झाम उसकी नज़र में अपना आकर्षण खो देते हैं। उसकी आत्मा को प्राकृतिक चीज़ों

में शांति मिलती है। अप्राकृतिक और कृत्रिम चमक-दमक उसे ऐसा महसूस होती है, जैसे वे उसकी आंतरिक दुनिया को अस्त-व्यस्त कर रही हों, जैसे वे उसके आध्यात्मिक सफ़र में बाधा बन रही हों।

सादगी मुसलमान की ताक़त है। यह उसकी सहायक होती है। सादगी अपनाकर मुसलमान इस योग्य हो जाता है कि वह अपना समय फ़ालतू चीज़ों में बर्बाद न करे। वह अपनी एकाग्रता को गैर-ज़रूरी चीज़ों में उलझने से बचाता है और इस तरह अपने आपको पूरी तरह अपने उच्च उद्देश्य को प्राप्त करने में लगा देता है।

सादगी मुसलमान का आहार है। यह उसकी विनम्रता का वस्त्र बन जाती है। सादगी के माहौल में उसकी शख़्सियत बेहतर रूप से विकसित होती है। सादगी ही उसकी सुंदरता है। सादगी ही उसकी ज़िंदगी है। अगर मुसलमान अपने आपको कृत्रिम चमक-दमक में पाए, तो उसे ऐसा महसूस होगा जैसे उसे किसी क़ैदख़ाने में बंद कर दिया गया हो।

मुसलमान अंत तक अपने आपको ईश्वर का सेवक समझता है। यह भावना उसे पूरी तरह विनम्रता में जीने वाला बना देती है और जो व्यक्ति इस भावना के साथ जीता है, उसका स्वभाव स्वाभाविक रूप से सादगी भरा होता है। ग़ैर-सादगी का तरीक़ा उसके स्वभाव से मेल नहीं खाता, इसलिए वह उसे अपनाता भी नहीं।

ईश्वरीय तरीक़ा

संसार में अनगिनत तारे और ग्रह हैं। ये सभी विशाल अंतरिक्ष में हर पल घूम रहे हैं। अंतरिक्ष जैसे अनगिनत गतिशील पिंडों की दौड़ का एक अथाह मैदान है, लेकिन आश्चर्य की बात यह है कि इन तारों और ग्रहों में कभी टकराव नहीं होता।

इसका रहस्य क्या है? इसका रहस्य यह है कि हर तारा और ग्रह पाबंदी से अपने-अपने दायरे में घूमता है। वह अपाने दायरे से ज़रा भी बाहर नहीं जाता। यही गति का नियम है, जो इन तारों और ग्रहों को आपस में टकराने से हमेशा रोकता है।

ठीक यही तरीक़ा इंसान के लिए भी आवश्यक है। इंसान के जीवन के लिए भी ईश्वर ने एक दायरा निर्धारित किया है। हर इंसान को उसी सीमित दायरे के भीतर रहकर काम करना है। जब सभी इंसान अपने-अपने दायरे में रहकर काम करें तो समाज में अपने आप शांति की स्थिति बन जाती है, लेकिन जब लोग अपनी सीमा में न रहें और निर्धारित सीमा को तोड़कर इधर-उधर दौड़ने लगें, तो ऐसे समाज में अनिवार्य रूप से टकराव पैदा हो जाएगा। लोग एक-दूसरे से टकराकर न केवल ख़ुद को नष्ट करेंगे, बल्कि दूसरों की बर्बादी का भी कारण बनेंगे।

सामाजिक जीवन में इंसान को कैसे रहना चाहिए? उसे दूसरों के साथ कैसा व्यवहार करना चाहिए? उसकी बातें और उसके कर्म किस तरह होने चाहिए? इन सभी चीज़ों के लिए ईश्वर ने स्पष्ट आदेश दिए हैं। उसने बता दिया है कि इंसान को क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए। जो लोग जीवन के मामलों में वही करें, जिसकी ईश्वर ने उन्हें अनुमति दी है, वे मानो अपनी निर्धारित दायरे में चल रहे हैं।

इसके विपरीत, जो लोग वह करने लगते हैं जिससे ईश्वर ने उन्हें रोका है, वे अपनी निर्धारित दायरे से बाहर आ जाते हैं। ऐसे लोग ही समाज में हर तरह की बुराइयाँ पैदा करते हैं। वे ख़ुद भी बर्बाद होते हैं और समाज की बर्बादी का भी कारण बनते हैं।

सच्चा इंसान वह है, जो ईश्वर द्वारा निर्धारित दायरे में रहकर जीवन जीता है। यही वे लोग हैं, जो इस दुनिया में भी ईश्वर की कृपा पाएँगे और परलोक में भी उसकी अनंत रहमत से सम्मानित होंगे।

धन

धन जीवन की ज़रूरत है, लेकिन जीवन का उद्देश्य नहीं है। अगर धन को इस उद्देश्य से कमाया जाए कि इससे जीवन की ज़रूरी आवश्यकताएँ पूरी हों, तो यह इंसान के लिए एक बेहतरीन सहायक है, लेकिन अगर धन को ही जीवन का लक्ष्य बना लिया जाए और बस ज़्यादा-से-ज़्यादा धन कमाना ही इंसान का सबसे बड़ा काम बन जाए, तो ऐसा धन एक मुसीबत बन जाता है। वह इंसान को इस दुनिया में भी बर्बाद करेगा और परलोक में भी।

इंसान को इस दुनिया में कुछ समय तक जीना है। इसलिए उसे कुछ भौतिक संसाधनों की आवश्यकता होती है, जो उसके लिए जीने का सहारा बन सकें। ये संसाधन धन के माध्यम से प्राप्त होते हैं। इसलिए कमाई करके धन अर्जित करना हर व्यक्ति के लिए आवश्यक है। इस दृष्टि से धन हर व्यक्ति के लिए एक क़ीमती सहायक है।

लेकिन इंसानी ज़िंदगी का दूसरा पहलू यह है कि उसे ज्ञान प्राप्त करना है। उसे आध्यात्मिक उन्नति के लिए प्रयास करना है। उसे इंसानियत की भलाई और विकास में सकारात्मक योगदान देना है। उसे अपने आपको ऐसा बनाना है कि समाज में वह एक उपयोगी सदस्य बनकर रह सके।

यही वह चीज़ है जिसे जीवन का उद्देश्य कहा जाता है। इस उद्देश्य को प्राप्त करना तभी संभव है, जब व्यक्ति अपनी शक्ति का एक हिस्सा इसमें लगाए। धन कमाने की गतिविधियों को एक सीमा में रखते हुए वह इन कार्यों के लिए समय निकाले। धन व्यक्ति की शारीरिक या भौतिक ज़रूरतों को पूरा करता है, लेकिन यह उसकी आध्यात्मिक और मानसिक ज़रूरतों की पूर्ति के लिए पर्याप्त नहीं है। जो व्यक्ति

धन को ही अपने जीवन का उद्देश्य बना लेता है, उसका शरीर तो निरंतर पोषण पाता रहेगा, लेकिन उसकी आत्मा भूखी रहेगी। उसकी मानसिकता अपनी पोषण से वंचित होकर ऐसी हो जाएगी, जैसे उसका कोई अस्तित्व ही न हो।

इसीलिए धन को एक परीक्षा कहा गया है। अर्थात यह इंसान के लिए एक परीक्षा है। धन का सही उपयोग इंसान को हर तरह की उन्नति की ओर ले जाता है, जबकि धन का ग़लत उपयोग उसे बर्बादी के गड्ढे में गिरा देता है।

खोना, पाना

दुनिया में इंसान कभी कुछ खोता है और कभी कुछ पाता है। ये दोनों अनुभव ऐसे हैं, जो हर व्यक्ति को और हमेशा होते रहते हैं। कोई भी व्यक्ति इससे बचा हुआ नहीं है।

अब सवाल यह है कि इंसान को इन अनुभवों को किस नज़रिए से लेना चाहिए। इस्लाम सिखाता है कि ये दोनों ही अनुभव एक परीक्षा हैं। यहाँ कुछ पाना अपने आप में सफलता नहीं है। उसी तरह कुछ खोने का मतलब यह नहीं है कि इंसान पूरी तरह असफल हो गया। खोने या पाने के मामले में असली महत्त्व इस बात का नहीं है कि इंसान ने क्या खोया या क्या पाया। असली महत्त्व इस बात का है कि जब ये अनुभव उसके साथ हुए, तब उसने किस तरह की प्रतिक्रिया दी।

जब इंसान कुछ खो दे तो उसे ऐसा नहीं करना चाहिए कि वह ख़ुद को हताश और असफल समझकर अपना हौसला खो दे या शिकायत करने लगे। इसके बजाय उसे चाहिए कि वह धैर्य दिखाए। इसे सहन

करते हुए अपनी मानसिक शांति बनाए रखे। उसे यह सोचना चाहिए कि देने वाला भी ईश्वर है और लेने वाला भी ईश्वर। इसलिए मुझे ईश्वर के फ़ैसले को स्वीकार करना है। ईश्वर के फ़ैसले को मानकर ही मैं दोबारा उसकी कृपा और ध्यान पाने के योग्य हो सकता हूँ।

इसी तरह जब इंसान कुछ पाता है, तो उसे ऐसा नहीं करना चाहिए कि वह घमंड और अहंकार में पड़ जाए। वह ख़ुद को बड़ा समझने लगे। इसके विपरीत उसे यह करना चाहिए कि उसकी सफलता उसे और विनम्र बनाए। ईश्वर और इंसानियत के प्रति जो उसके कर्तव्य हैं, उन्हें वह और अधिक सतर्कता के साथ निभाए।

इस दुनिया में खोना भी परीक्षा है और पाना भी परीक्षा। न तो खोने वाला असफल है और न ही पाने वाला सफल। सफलता और असफलता का असली पैमाना यह है कि इन अनुभवों के बाद इंसान कैसा साबित होता है। सफल वही है, जो खोने और पाने के अनुभवों के बावजूद संतुलन बनाए रखे। इनमें से कोई भी अनुभव उसे संतुलन से न हटाए। ऐसे ही लोग ईश्वर की दृष्टि में सफल होते हैं। कोई भी चीज़ उनकी सफलता में बाधा नहीं डाल सकती।

मुक्ति (नजात)

इंसान की सबसे बड़ी समस्या क्या है? यह है कि मौत के बाद आने वाली ज़िंदगी में उसे मुक्ति प्राप्त हो। वह ईश्वर की अनंत कृपा में स्थान पाए।

हर इंसान, जो इस दुनिया में पैदा हुआ है, उसे मौत के बाद एक और दुनिया में प्रवेश करना है। इस दुनिया में इंसान को जीवन के जो मौक़े मिले हैं, वे एक परीक्षा के लिए हैं, लेकिन अगली दुनिया में

जो कुछ भी मिलेगा, वह उसके कर्मों के आधार पर मिलेगा। इसका मतलब यह है कि मौत से पहले की दुनिया में हर व्यक्ति को हर चीज़ स्वाभाविक रूप से मिली होती है, चाहे वह उसका हक़दार हो या न हो, लेकिन मौत के बाद की दुनिया में यह व्यवस्था समाप्त हो जाएगी। वहाँ चीज़ों को पाने का आधार ''योग्यता' होगा, न कि'परीक्षा'।

इसका अर्थ यह है कि अगली दुनिया में जो लोग हक़दार साबित होंगे, उन्हें हर प्रकार की नेमतें और भी ज़्यादा मिलेंगी, लेकिन जो लोग अयोग्य साबित होंगे, उनके लिए वहाँ कुछ भी नहीं होगा। वे मजबूर होंगे कि वहाँ वे पूरी तरह से वंचित होकर जीवन बिताएँ।

यही हर इंसान की सबसे बड़ी समस्या है। हर इंसान को सबसे ज़्यादा इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि ऐसा न हो कि वह अगली ज़िंदगी में अयोग्य साबित हो और मुक्ति पाने वालों में शामिल न हो। हर इंसान को अपनी सारी ताक़त और ध्यान इस बात पर लगाना चाहिए कि इस दुनिया में वह ऐसा जीवन जिए कि अगले जीवन के चरण में वह अयोग्य साबित न हो, बल्कि वहाँ उसे सुख और मुक्ति प्राप्त हो।

अगली दुनिया एक बेहद संपूर्ण और अनंत दुनिया है। वहाँ हर प्रकार की सुख-सुविधाएँ और ख़ुशियाँ भरपूर मात्रा में रखी गई हैं। यही वह दुनिया है, जिसकी इंसान को कामना करनी चाहिए और यही वह दुनिया है, जिसके लिए इंसान अपनी सारी ऊर्जा ख़र्च कर दे, लेकिन इस नेमतों भरी दुनिया के लिए कर्म करने का समय सिर्फ़ मौत से पहले की दुनिया है, मौत के बाद की दुनिया नहीं। आज की दुनिया कर्म करने की जगह है और अगली दुनिया कर्मों का फल पाने की जगह। मुक्ति केवल उन लोगों को मिलेगी, जो इस दुनिया में अपने आपको मुक्ति के योग्य साबित करेंगे।

जिहाद

जिहाद का मतलब कोशिश करना है। धर्म के मार्ग में किसी भी सच्चे प्रयास को जिहाद कहा जाएगा। इंसान की इच्छाएँ उसे बुराई की ओर ले जाना चाहती हैं। उस समय अपनी इच्छाओं से लड़कर बुराई से बचने का नाम जिहाद है। दोस्त, साथी या सामाजिक दबाव किसी ऐसे काम को करवाना चाहते हैं, जो सही नहीं है, उस समय लोगों के दबाव को न मानना और सही रास्ते पर डटे रहना जिहाद है।

लोगों को अच्छी बातें बताना और उन्हें बुरी चीज़ों से रोकना, मेहनत वाला काम है, लेकिन मुश्किलों को सहते हुए सच्चाई की ओर बुलाते रहना भी जिहाद है।

पड़ोसियों या संबंधियों से कोई कड़वी बात सुनने को मिले या कोई बुरा अनुभव हो जाए और उससे ग़ुस्सा आ जाए, लेकिन फिर भी ख़ुद को जवाबी कार्रवाई से रोककर, सिर्फ अच्छे संबंध बनाए रखना भी जिहाद है।

जिहाद का एक और प्रकार है जिसे क़िताल कहा जाता है। मतलब, ईश्वर के आदेशों का पालन करते हुए आक्रमणकारी से लड़ना। यह जिहाद हमले के ख़िलाफ़ अपनी रक्षा के लिए होता है। जिहाद शब्द का सामान्य अर्थ युद्ध नहीं है, लेकिन ईश्वर के आदेशों का पालन करते हुए अपनी रक्षा के लिए संघर्ष भी एक कोशिश है, इसलिए इसे भी जिहाद कहा जाता है।

क़िताल (युद्ध वाला जिहाद) एक अस्थायी और आकस्मिक घटना है। अगर कभी वास्तव में बचाव की ज़रूरत हो, तो उस समय यह जिहाद किया जाएगा और अगर ऐसी स्थिति न हो, तो क़िताल रुका रहेगा।

किसी काम को जिहाद नाम देने से वह जिहाद नहीं बन जाता। जिहाद केवल वही होता है, जो इस्लामी सिद्धांतों के अनुसार हो और इस्लामी जिहाद मूल रूप से शांतिपूर्ण संघर्ष का नाम है। यह संघर्ष कभी आंतरिक रूप से ज़रूरी होता है और कभी बाहरी रूप से। कभी यह भावनाओं के स्तर पर होता है और कभी बाहरी कर्मों के स्तर पर।

ईश्वर को पुकारना

दुआ का मतलब है पुकारना। इसका मतलब है कि इंसान अपनी ज़रूरतों और विभिन्न पहलुओं के लिए ईश्वर को पुकारे। यह पुकार ख़ुद में एक इबादत है।

ईश्वर एक जीवित और हमेशा रहने वाला अस्तित्व है। वह देखता है, सुनता है और यह ताक़त रखता है कि जो चाहे कर सके और जैसा चाहे घटनाओं का क्रम निर्धारित कर सके।

ईश्वर के बारे में यही विश्वास इंसान के अंदर दुआ की भावना पैदा करता है। जब इंसान को ईश्वर की पहचान हो जाती है, तो स्वाभाविक रूप से उसमें यह भावना भी पैदा हो जाती है कि वह अपनी ज़रूरतों के लिए ईश्वर को पुकारे। वह उससे दुनिया और परलोक की ख़ुशियाँ माँगे। वह उसे अपना सहारा बना ले।

दुआ का न कोई समय निर्धारित है, न कोई तरीक़ा और न ही इसकी कोई ख़ास भाषा है। इंसान हर पल, हर हाल में और हर भाषा में ईश्वर से दुआ कर सकता है। अगर दुआ सच्चे दिल से निकली है तो वह यक़ीनन ईश्वर तक पहुँचेगी। ईश्वर उसे तुरंत सुनेगा और उसके मुताबिक़ उसकी क़ुबूलियत का फ़ैसला करेगा।

कुछ दुआएँ वे हैं, जो विभिन्न इबादतों के साथ दोहराई जाती हैं, लेकिन ज़्यादातर दुआएँ वे हैं, जो किसी दूसरे काम से नहीं जुड़ी होतीं। जैसे इंसान जब रात में सोने के लिए बिस्तर पर जाता है, तो उसकी ज़ुबान से रात के अनुसार कुछ दुआएँ निकलती हैं। इसी तरह जब वह सुबह जागता है, तो वह नए दिन की शुरुआत के लिए दुआ करता है। जब वह किसी से मिलता है, खाता-पीता है, सवारी करता है, यात्रा करता है या अपने कामों में व्यस्त होता है, तो उसकी ज़ुबान से उस समय के अनुसार ऐसी दुआएँ निकलती हैं, जो ईश्वर से अच्छे परिणाम की माँग करती हैं।

दुआ का मतलब है ईश्वर से माँगना और यह माँगना कभी समाप्त नहीं होता। यह हर हाल में लगातार जारी रहता है। दुआ अपने रब के साथ कभी न ख़त्म होने वाले दिली रिश्ते का इज़हार है। एक मुसलमान की ज़िंदगी का कोई भी पल दुआ से खाली नहीं हो सकता।

पुस्तक **"इस्लाम क्या है?"** में इस्लाम के बुनियादी सिद्धांतों को सरल और प्रभावी ढंग से समझाया गया है। इस्लाम, मानवता के लिए ईश्वर द्वारा निर्धारित एक जीवन शैली है, जिसका मुख्य उद्देश्य इंसान को एक नैतिक और परिपूर्ण जीवन जीने के लिए प्रेरित करना है।

इस्लाम के सिद्धांत, जैसे एक ईश्वर की मान्यता, परलोक पर विश्वास, और नैतिक मूल्यों की स्थापना, जीवन को एक दिशा और उद्देश्य प्रदान करते हैं। यह हमें सिखाता है कि हमारी आज़ादी ईश्वर की योजना का हिस्सा है और हमें अपनी इच्छाओं के बजाय ईश्वर की इच्छाओं को प्राथमिकता देनी चाहिए।

इस्लाम को मुसलमानों के व्यवहार से नहीं आंका जाना चाहिए, बल्कि मुसलमानों को इस्लामी शिक्षाओं की कसौटी पर परखा जाना चाहिए। यही दृष्टिकोण इस्लाम की वास्तविकता को समझने और उसे सही तरीके से अपनाने का मार्ग दिखाता है।

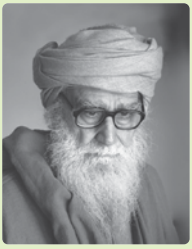

मौलाना वहीदुद्दीन ख़ान 'सेंटर फॉर पीस एंड स्प्रिचुएलिटी', नई दिल्ली के संस्थापक थे। मौलाना का मानना था कि शांति और आध्यात्मिकता एक ही सिक्के के दो पहलू हैं : आध्यात्मिकता शांति की आंतरिक संतुष्टि है और शांति आध्यात्मिकता की बाहरी अभिव्यक्ति। मौलाना ने शांति और आध्यात्मिकता से संबंधित 200 से अधिक पुस्तकें लिखी हैं। विश्वशांति में अपने महत्वपूर्ण योगदान के लिए उन्हें अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पहचान प्राप्त थी।

CPS International
centre for peace and spirituality
www.cpsglobal.org
info@cpsglobal.org

Goodword
www.goodwordbooks.com
info@goodwordbooks.com